!! अयोध्यासरयूभ्यां नमः !!

अयोध्या - दर्पण

लेखक एवं प्रकाशक

ब्रह्मचारी श्री भगीरथराम जी

शान्तिकुटी, गोकुल भवन, वशिष्ठ कुण्ड

श्री अयोध्याजी (उ०प्र०)

सम्पादक

गणेशदास 'भक्तमाली'

सुदामाकुटी, वृन्दावन (मथुरा)

चैत्र शुक्ल ९ (रामनवमी) सं० 2049

चतुर्थ संस्करण
2013
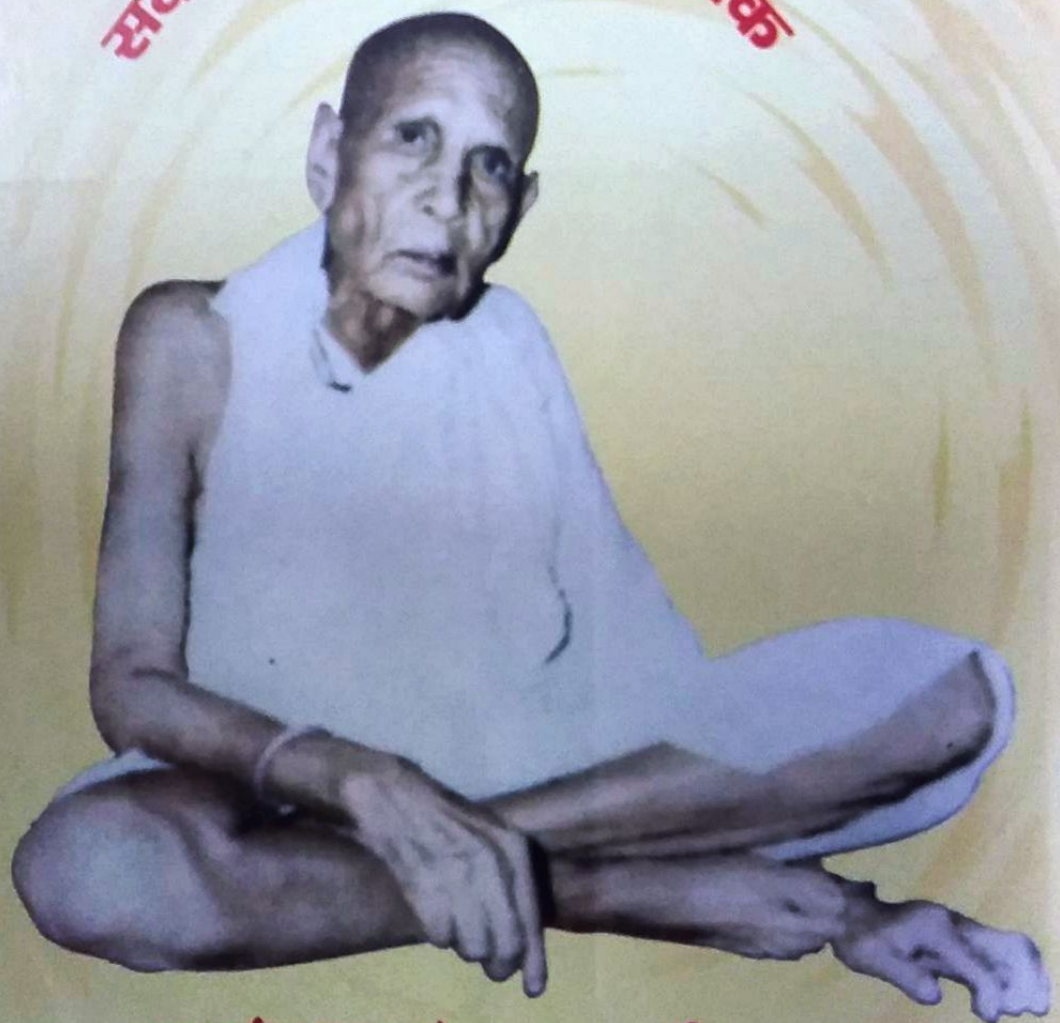
सर्वधर्म समन्वय के प्रतीक
परमहंस राममंगल दास जी महाराज
गोकुल भवन
अयोध्या

!! अयोध्यासरयूभ्यां नमः !!

अयोध्या-दर्पण

लेखक एवं प्रकाशक

ब्रह्मचारी श्री भगीरथराम जी

शान्तिकुटी, गोकुल भवन, वशिष्ठ कुण्ड

श्री अयोध्याजी (उ0प्र0)

सम्पादक

गणेशदास 'भक्तमाली'

सुदामाकुटी, वृन्दावन (मथुरा)

चैत्र शुक्ल 9 (रामनवमी) सं0 2049

चतुर्थ संस्करण

2013

सहयोग राशि 30/-

प्रकाशक

भक्ति साहित्य सुरक्षा समिति, शान्ति कुटी,
गोकुल भवन, वशिष्ठ कुण्ड, अयोध्या (उ0प्र0)

प्राप्ति स्थान

गोकुल भवन, अयोध्या

विनम्र निवेदन

ब्रह्मचारी श्री भगीरथराम जी द्वारा लिखित एवं प्रकाशित तथा गणेशदास 'भक्तमाली' द्वारा सम्पादित "अयोध्या-दर्पण" नामक यह पुस्तक वर्तमान में लगभग अप्राप्य थी। श्री गोकुल भवन अयोध्या में निवास कर रहे श्री जगदम्बादास (अवस्थी जी) ने इस पुस्तक की महत्ता का अनुभव करते हुए अयोध्या माहात्म्य को जानने की जिज्ञासा वाले भक्तजनों के हितार्थ इस पुस्तक को पुनः प्रकाशित कराने तथा सर्व साधारण को इसे उपलब्ध कराने की इच्छा व्यक्त की।

श्री अवस्थी जी के अनुरोध पर पुस्तक की एक हजार प्रतियाँ मुद्रित की जा रही हैं

मुद्रक

हेमांगी आफसेट, उन्नाव - 209801

दूरभाष :- 9838500349

!! श्रीभगवद्भक्तेभ्यो नमः !!

शुभ-कामना

व्रजरजलीन पूज्य पण्डित श्रीजगन्नाथ प्रसाद जी 'भक्तमाली'

श्रीअयोध्या निवासी श्रीभगीरथराम जी ब्रह्मचारी ने 'अयोध्या-दर्पण' नाम का ग्रन्थ प्रकाशित किया है, जो वैष्णवों तथा अन्य भक्तगणों को प्रेरणा देने वाला है। इसके पठन-पाठन से तीर्थ-महिमा का सम्यक् परिचय प्राप्त होगा और धामनिष्ठा की परिपुष्टि होगी। इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार की मेरी शुभकामना है। साथ ही लेखक के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

शुभेच्छु

-पं० जगन्नाथ प्रसाद जी 'भक्तमाली'

ज्ञानगुदड़ी श्रीधाम वृन्दावन

शुभ-कामना

ब्रह्मलीन अनन्त श्रीविभूषित श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज

श्रीभगीरथराम ब्रह्मचारी द्वारा लिखित 'अयोध्या-दर्पण' नामक पुस्तक का अवलोकन किया। यह पुस्तक श्री अयोध्या की एवं अयोध्या के तीर्थों की महा-महिमा का दिग्दर्शन कराती है। लेखक का प्रयास सराहनीय है। यह पुस्तक अतीव उपादेय एवं संग्राह्य है।

- करपात्री स्वामी, वाराणसी

!! श्रीजानकीबल्लभो विजयते नमः !!

अयोध्या-दर्पण का वैशिष्ट्य

लेखक : मानस मर्मज्ञ-आचार्य प्रवर, पं0 श्रीसच्चिदानन्ददास जी रामायणी महाराज, महन्त-वरविश्राम बाग, श्रीरामग्रन्थागार, मणिपर्वत, श्रीअयोध्या

सन्त भगीरथराम का, यह अप्रतिम प्रयास।
लाभान्वित होंगे सभी, मम उर दृढ़ विश्वास।।1।।
सभी अयोध्या-तीर्थ थल, दर्पणवत दिखलात।
नाम 'अवध-दर्पण' तभी, सब प्रकार विख्यात्।।2।।
तीर्थ यात्रियों-शोधकों के, हित कार्य महान्।
राम भक्तगण के लिये, अद्भुत-अनुपम दान।।3।।
सरकारी अधिकारियों का, हो शुद्ध विचार।
जीर्ण स्थलियों का सभी, हो जाये उद्धार।।4।।
अन्वेषक श्रीअवध के, सन्त-प्रवर सानन्द।
चिरंजीवी हों कामना, करत 'सच्चिदानन्द'।।5।।

संस्कृत वाङ्मय में अयोध्या की चर्चा विस्तार पूर्वक वर्णित है। हिन्दी में भी कविकुल-कमल-दिवाकर गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी ने अपने द्वादश ग्रन्थों में भूरि-भूरि प्रशंसा विविध छन्दों में अलंकृत किया है।

संप्रति जनता की आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए सन्त-प्रवर ब्रह्मचारी श्री भगीरथरामजी ने 'अयोध्या-दर्पण' नामक जिस उपयोगी ग्रन्थ की संरचना की है, वह शीर्षस्थ चिन्तकों, विचारकों एवं विद्वानों द्वारा प्रशंसित तथा समादरणीय है।

विशेषतः श्रीअयोध्या स्थित समस्त तीर्थ सम्बन्धी उलझनों को निपटाने के लिये और तीर्थों में आस्था दृढ़ करने हेतु यह ग्रन्थ अति उपादेय है। इसमें दी गई तीर्थ सीमाओं से वे सारे भ्रम दूर हो जाते हैं जो श्रीराम-जन्मभूमि को संशयास्पद बनाये हुए हैं।

वस्तुतः श्रीराम-जन्मभूमि ही श्रीअयोध्याके समस्त तीर्थ-स्थलियों

का मेरुदण्ड है। जिसका स्पर्श करके ही श्रीअवध के समग्र तीर्थ अनुप्राणित हैं। धर्म-ग्रन्थों में भी श्रीराम-जन्मभूमि को प्रधान मानकर सम्पूर्ण तीर्थों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रन्थ से शासकों को भी किसी भी तथ्यात्मक निर्णय में बहुत बड़ी सहायता मिलेगी। 'अयोध्या-दर्पण' के माध्यम से ही चतुर्दश-कोशी एवं पञ्च-कोशी परिक्रमा मार्ग का निर्माण सम्पन्न हुआ है।

उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल श्री विश्वनाथदास जी ने अपने शासनकाल में इस श्रेष्ठ ग्रन्थ के प्रति अतीव श्रद्धा व्यक्त करते हुए लेखक श्री ब्रह्मचारीजी को बधाई दी थी। उन्होंने ही समादरणीय श्री भगीरथराम जी के अनुरोध से तुलसी स्मारकों का निर्माण स्वीकृत किया था, तथा शासन के द्वारा ही सम्पूर्ण व्यय-भार भी वहन हुआ था। आज भी अयोध्या के विकास हेतु शासन दत्तचित्त है।

इसका सारा श्रेय 'अयोध्या-दर्पण' को ही प्राप्त है, क्योंकि इसी ग्रन्थ ने अयोध्या-विकास की ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया। आज पूरे विश्व के पर्यटकों का आकर्षण दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। उनके लिए तो ऐसे ग्रन्थ की महती आवश्यकता है। पाठकों के आग्रहानुसार इस ग्रन्थ का विभिन्न भाषाओं- बँगला, गुजराती, द्रविड़, मलयालम, महाराष्ट्र, गुरूमुखी एवं अंग्रेजी में भी रूपान्तरित किया जाना परमावश्यक है, जो राज्य सरकार के सहयोग से ही सम्भव है।

मैं इस ग्रन्थरत्न के लिये हृदय से शुभकामना व्यक्त करता हूँ। साथ ही सम्माननीय श्रीभगीरथराम ब्रह्मचारीजी को दीर्घजीवी बनाकर इसी प्रकार साहित्य-सृजन सेवा में लगाये रखने के लिये भगवान श्री सीताराम जी से प्रार्थना करता हूँ।

'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।' इत्यलम्।

(दि0 4-2-1992) भगवद्भागवतानुचरः- **पं0 सच्चिदानन्ददासः**

।। श्री राधाबल्लभो विजयते।।
।। श्रीहितहरिवंशचन्द्रो जयति।।

शुभ-कामना

परमभागवत स्वामी श्रीहितदास जी महाराज
अध्यक्ष :- श्री हिताश्रम सत्संग भूमि, गान्धीमार्ग, श्रीवृन्दावन

पूज्य चरण ब्रह्मचारी श्रीभगीरथरामजी महाराज के द्वारा विदित हुआ है कि 'श्री अयोध्या-दर्पण' के तृतीय संस्करण का प्रकाशन हो रहा है द्वितीय संस्करणका मैंने अवलोकन किया है। इस ग्रन्थ का मूलाधार रुद्रयामलोक्त अयोध्या-माहात्म्य है जो तीस अध्यायों में वर्णित है। उसका सार-सर्वस्व संक्षिप्तः हिन्दी - भाषियों के लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी में समयोचित सुसज्जा के साथ श्रीब्रह्मचारीजी ने प्रस्तुत किया है जो अति उपादेय है और मनीषी, विद्वानों एवं भक्तों के द्वारा समादृत है। मैं ऐसे मंगलमय ग्रन्थ के लिए अपनी शुभकामनायें देता हूँ।

श्री राधाबल्लभलाल जी इन्हें सफलता और सुयश प्रदान करें।

। इतिशम्।

हितदास

फाल्गुन शुक्ल 11 सं0 2048 वि0

दि0 15-3-1992

।। अयोध्यासरयूभ्यां नमः ।।

प्राक्कथन

प्रिय पाठकवृन्द !

श्रीअयोध्याधाम निष्ठाकी परिपुष्टिके लिए अयोध्यामाहात्म्य को जानने की नितान्त आवश्यकता है क्योंकि 'जाने बिन न होइ परतीती। बिन परतीति होय नहिं प्रीती।' जानने के लिए पठन-श्रवण आवश्यक है। वह ग्रन्थों से ही सम्भव है अतः अयोध्या-माहात्म्य सम्बन्धी ग्रन्थ की परमावश्यकता है। जिसके सारभूत अंशको प्रमाण रूप में उद्धृतकर 'अयोध्या-दर्पण' नामक ग्रन्थ प्रस्तुत किया गया। जिसके दो संस्करण इसके पूर्व प्रकाशित हो चुके। जिनका विद्वज्जनोंने समादर किया और उन्हें पढ़-सुनकर पढ़ने-सुनने की जनाकांक्षा दिनों-दिन बढ़ती गई, तदनुसार यह तृतीय संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। इसमें विशेषकर उन तात्विक सामग्रियों का समावेश है जो कि तीर्थ यात्रियों के लिए नितान्त आवश्यक है।

यह सर्वस्वीकृत है कि जिस तीर्थ में जाया जाय, उसके माहात्म्यका अध्ययन, श्रवण अवश्य किया जाना चाहिए, तभी यात्री को सम्पूर्ण तीर्थफल प्राप्त होता है क्योंकि यात्री श्रद्धाभिभूत होकर तत्तत् तीर्थों का समादर करता है और वहाँ के निवासीजनों के प्रति उसकी सद्भावना जागरूक होती है।

प्रामाणिकता के लिए स्कन्दपुराण वैष्णवखण्ड, रुद्रयामल (तीस अध्याय) वेदों में अयोध्या आदि में वर्णित अयोध्या-माहात्म्य का तुलनात्मक विवेचन करते हुए हिन्दी अनुवाद भी कर दिया गया है। साथ ही यत्र-तत्र तीर्थ सम्बन्धी कर्तव्य निर्धारण करते हुए कुछ तीर्थों के पुनरुद्धार की चेतना भी इस ग्रन्थ में दी गई है। समयोचित योजना से अभिभूत सभी दिशाओं में प्रयास किया गया है और तीर्थ गौरव-रक्षणार्थ शासन का भी योगदान के लिए आवाहन किया गया है। उपासकों के लिए तीर्थ परिचय के साथ

यत्र-तत्र उनके स्तवन एवं अर्चन की विधियां भी इस ग्रन्थ में उल्लिखित हैं। शोधपरक छानबीन करते हुए यह तथ्य सामने आया है कि जिस किसी स्थल पर निरन्तर भगवदाराधन होता हुआ मिला है और पूर्णतः अर्पित भगवज्जन जहाँ निवास करते हैं, उस स्थल या आश्रम के चतुर्दिक्‌की भूमि तीन-तीन योजन पर्यन्त दिव्य परमाणुओं से ओत-प्रोत हो जाती है और वहाँ तक की भूमि तीर्थ का स्वरूप धारणकर लेती है। अर्धनास्तिक या नास्तिक कैसा भी प्राणी क्यो न हो उन दिव्य परमाणुओं के प्रभाव से प्रभावित होकर ईश्वर के प्रति नतमस्तक होता है तथा भक्ति भगवती के साम्राज्य में अपने को अर्पित करता है।

तीर्थों का सेवन करने से साधुता पुष्ट होती है और उन साधु-सन्तों से तीर्थ सुशोभित होते हैं अर्थात् 'तीर्थी कुर्वन्ति तीर्थानि तीर्थभूता हि साधवः'। सन्त तीर्थों को तीर्थ बनाते हैं एवं वे स्वयं तीर्थरूप हैं। आशा है कि इस ग्रन्थ में सन्त तथा शोधकर्ताजन लाभान्वित होंगे।

विनीत-लेखक

विषय-सूची

प्रातः स्मरण

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द, उत्तिष्ठ रघुनन्दन।
उत्तिष्ठ जानकीनाथ, जगतः मंगलम् कुरु।।

प्रातः स्मरामि रघुनाथ मुखारविन्दं,
मन्दस्मितं मधुरभाषि बिशालभालम्।
कर्णावलम्बि चलकुण्डल शोभिगण्डम्,
कर्णान्त दीर्घनयनं नयनाभिरामम्।।1।।

प्रात पुनीतकाल प्रभु जागे। अरुण चूड़ वर बोलन लागे।।
प्रातकाल उठिकै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
प्रातकाल सरयू करि मज्जन। बैठहिं सभा संग द्विज सज्जन।।
वेद पुराण वशिष्ठ बखानहिं। सुनहिं राम यद्यपि सब जानहिं।।
अनुज सखा संग भोजन करहीं। गुरु पितु मातु वचन अनुसरहीं।।
ज्यहिं विधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं राम सोइ सोइ संयोगा।।
आयसु माँगि करहिं पुरकाजा। देखि चरित हरषै मन राजा।।
राम राज बैठे त्रयलोका। हरषित भए गए सब शोका।।
बैर न कर काहू सन कोई। रामप्रताप विषमता खोई।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

दोहा- विधु महिपूर मयूखन्ह, रबि तप जेतनहिं काज।
मांगे वारिद देहिं जल, रामचन्द्र के राज।।

श्री किशोरी जी वन्दना

ठुमुक-ठुमुक चलत चाल जनकनन्दिनी।
मधुर वचन तोतरे त्रयताप मोचिनी।।

सोहत नवनीत वसन मन्दहास रुचिरदसन।
झलकत उरमाल सकल देव वन्दिनी।।

बाजत पग नूपुर मानो सामवेद करत गान।
क्षुद्र घन्टि रुचिर नाद उर अनन्दिनी।।

जगतमातु सखिन संग विहरत बहु करत रंग।
अग्र अली निरखत छवि भव निकन्दिनी।।

पुरी परत्व

सरयू सरिता राज सबनते पुरी शिरोमणि रामपुरी।
वेदन हू बहु भेदन गाई महिमा जाकी अघट धरी।।
शिव विरंचि सनकादिक नारद जपत ज्याहिं घरी घरी।
नाम उचार होत अध न्यारे जीवन दुरमति दूर टरी।।
जो कोउ बसत अयोध्या माहीं समसर ताहि न जात करी।
कूकर शूकर सबै बिष्णुपद पावत जात न अटक परी।।
जन्म भूमि राघव की प्यारी भुक्ति मुक्ति यह गरी गरी।।
'अग्र' अहै को जो नहिं बाञ्छत बसत जहाँ सर्वदा हरी।।

(श्रीअग्रदासजी के शब्दों में)

साधुवाद

धन्याहमप्यद्य चिराय राघवस्मृतिर्ममासीत् भवपाशमोचिनी।
तद्भक्तसंगोप्यति दुर्लभो मम प्रसीदतां दाशरथिः सदा हृदि।।

परम पावनी अयोध्या पुरी जो सब तीर्थों की मुकुटमणि स्वरूपा है उसका सम्यक् वर्णन अनेक ग्रन्थों का आलोडन करते हुए लेखक ने बड़ी गम्भीरता से इस 'अयोध्या-दर्पण' में प्रस्तुत किया है। इसके विगत दो संस्करण निकल चुके हैं जिसके प्रभाव से वर्तमान अयोध्या का श्रृंगार करने में श्रद्धालुजनों को तथा प्रशासन को अत्यधिक बल मिला है। इस ग्रन्थरत्न के सम्पादन में संलग्न विद्वद्जनों को विशेषकर भक्तमाली श्रीगणेशदास जी को मैं हार्दिक साधुवाद देता हूँ जिनके अथक परिश्रम से कठिन परिस्थितियों में यह ग्रन्थ सुसम्पन्न होकर पाठकों के समक्ष उपस्थित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस ग्रन्थ के पाठकों से मेरी हार्दिक अपील है कि वे इसमें वर्णित तीर्थों का समादर करते हुए उनके पुनरुद्धार की प्रक्रिया में योगदान करें और इस ग्रन्थ के प्रसार में भी अपनी प्रतिभा का उपयोग करें।

विनीत :

डा0 मनमोहन सरकार
संयोजक-'मानस सेवा समिति'
मोहन मन्दिर, अयोध्या (उ0प्र0)

श्री अवध-स्वरूप वर्णन

अवधपुरी निजधाम परम अति सुन्दर राजै।
हाटक मणिमय सदन नगन की कान्ति विराजै।।
पौरि द्वार अति चारु सुहावन चित्रित सोहैं।
चम्पतार मन्दार कल्पतरु देखत मोहैं।।
भवन भवन चित्राम चित्रकी रम्भा सोहैं।
बनज सुतन की पाँति कान्ति गोखन मग जोहैं।।
तोरण केतु पताक ध्वजा तहँ परम सोहाई।
मनो रघुबर हितकरन आय त्रिभुवन छवि छाई।।
बीथी बगर बजार रतन खँचि ज्योति उजासा।
रहन न पावै तिमिर सहज ही होति प्रकाशा।।
देखि पुरी छवि भरी मध्यके अटकत रथ रवि।
हर्षहिं वर्षहिं सुमन विवुधजन निरखि पुरी छबि।।
श्रीरघुवर यश भरी पुरी वर वर की दायन।
धर्मशील नर नारि सबै प्रभु सुयश परायन।।
गावत रघुवर चरित मिलत जित तित ते भामिनि।
स्वर अस कोकिल नाद रूपजनु दमकति दामिनि।।
निकटहिं सरयू सरित धरे अस उज्ज्वल धारा।
भवसागर को तरण विदित यह पोत उदारा।।
करैं जो मज्जन पान धन्य बड़ भाग जननके।
विविध भांति के घाट तहां मन थकित मुनिनके।।

(श्री अग्रदासकृत ध्यानमंजरी से)

नित्य - प्रार्थना

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवन्ता।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिन्धु सुता प्रियकन्ता।।
पालन सुर धरनी अद्‌भुत करनी मरम न जानइ कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करउ अनुग्रह सोई।।
जय जय अविनासी सब घट बासी व्यापक परमानन्दा
अविगत गोतीतं चरित पुनीतं माया रहित मुकुन्दा।।
ज्यहिं लागि विरागी अति अनुरागी विगत मोह मुनिवृन्दा।
निशिवासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानन्दा।।
ज्यहिं सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करउ अधारी चिन्त हमारी जानिअ भगति न पूजा।।
जो भव भय भंजन मुनि मन रंजन गंजन विपति वरूथा।
मन वच क्रम बानी छाँड़ि सयानी शरण सकल सुर यूथा।।
शारद श्रुति शेषा ऋषय अशेषा जा कहुँ कोउ नहिं जाना।
ज्यहि दीन पियारे वेद पुकारे द्रवहु सो श्रीभगवाना।।
भव वारिधि मन्दर सब विधि सुन्दर गुन मन्दिर सुखपुञ्जा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पदकञ्जा।।

दोहा - जानि सभय सुरभूमि सुनि, वचन समेत सनेह।
गगर गिरा गम्भीर भइ, हरनि शोक सन्देह।।

सियावर - रामचन्द्र की जय अयोध्या-रामलला की जय
! पवनसुत हनूमान जी की जय !

राम - लक्ष्मण - सीता
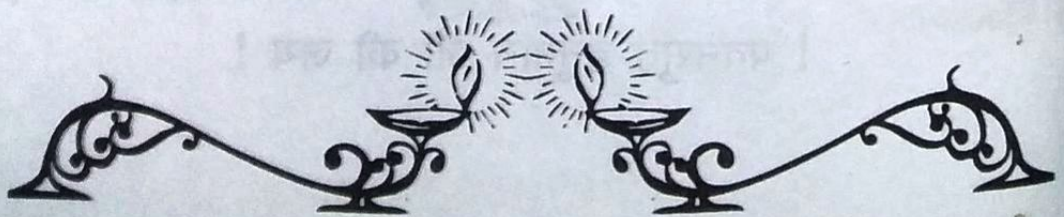
!! श्री जानकीवल्लभो विजयते !!

अयोध्या-दर्पण

श्री अयोध्या पञ्चकम्

याऽयोध्या जगती तलेतु मनुना वैकुण्ठतो ह्यानिता,
याचित्वा निजसृष्टिपालनपरं वैकुण्ठनाथं प्रभुम्
या वै भूमितले निधाय विमला चेक्ष्वाकवे चार्पिता
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नां परा मुक्तिदा।।1।।
या चक्रोपरि राजते च सततं वैकुण्ठनाथस्य वै,
या वै मानवलोकमेत्य सकलान् दात्री सदा वांछितान्।
या तीर्थानि पुनाति संततमहो वर्वर्त्ति तीर्थोपरि,
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नां परा मुक्तिदा।।2।।
यस्यां वैष्णव सज्जनाः सुरसिकाः स्वाचारनिष्ठाः सदा,
लीला धाम सुनाम रूप दयिताः, श्रीरामचन्द्रेरताः।
यस्यां श्रीरघुवंशजः परिकरैः सार्द्धं सदा राजते,
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नां परा मुक्तिदा।।3।।
यस्यां तीर्थशतं सदा निवसति ह्यानन्ददं पावनम्,
यस्या दर्शन लालसा मुनिवरा ध्यानेरताः सर्वदा।
यस्या भूमि रजस्त्वजादि विवुधा वाञ्छन्ति स्वामीष्टदम्,
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नां परा मुक्तिदा।।4।।
यस्यां भाति प्रमोदकाननवरं रामस्य लीलास्थलम्,
यत्र श्रीसरिताम्बरा च सरयू रत्नाचलः शोभते।
ध्येया ब्रह्ममहेशविष्णुमुनिभिर्ह्यानन्ददा सर्वदा,
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नां परा मुक्तिदा।।5।।

य: श्लोकपञ्चकमिदं मनुजः पठेत,
ध्यात्वाहृदि प्रतिदिनं रघुनन्दनाङ्घ्रिम्।।
हित्वा बहूनि दुरितानि पुरार्जितानि,
प्राप्नोत्वभीष्टधनधर्ममथापवर्गम् ।।6।।

श्री अयोध्या का प्राकट्य

एक समय श्री पार्वती जी ने भगवान् श्री शंकर जी से हाथ जोड़कर आदरपूर्वक-पूछा भगवन्! सज्जनों को सत्मार्ग का बोध कराने वाले विश्ववन्द्य जगद्गुरू एकमात्र आप ही हैं। जिन तत्वों को भलीभांति आप जानते हैं उस प्रकार दूसरा और कोई जानने में समर्थ नहीं है। हे महाभाग! आपने कृपा पूर्वक हमें अनेकानेक तीर्थों की सुन्दर कथायें सुनाई हैं पर मेरी श्रवणेच्छा अभी पूर्ण न हो सकी। अब आप कृपा करके हमें अयोध्या के प्राकट्य की अत्यन्त मनोहर श्रीराम सम्बन्धिनी कथा सुनाइये। जिसके लिए हम अत्यन्त लालायित हैं। आपके आश्रम पर उपस्थित हुए ये सब मुनिगण भी इस प्रसंग को सुनने की उत्कण्ठा प्रकट कर रहे हैं। परम उज्ज्वल दिव्य गुणों से युक्त सनातन से सुप्रसिद्ध जो अयोध्यापुरी सर्वश्रेष्ठा सुनी जाती है और श्रीहरि की परम प्रिय भूमि जहाँ श्री राघवेन्द्र स्वयं जन्म ग्रहण करके जगत् में लीला विकास करते हैं, सातों-पुरियों में सर्वश्रेष्ठा मुक्ति दान करने में जो प्रशंसा पा रही है और वेदों में आदि स्थान कहकर जिसकी प्रशंसा है, वह अयोध्यापुरी पृथ्वी तल पर किस प्रकार अवतीर्ण हुई, उसका स्वरूप कैसा है? कौन-कौन से विशिष्ट सम्राट् उसके उपभोक्ता हुए, इस प्रसंग को आप कृपा पूर्वक सविस्तार वर्णन कर हम सबकी श्रवण पिपासा को शान्त करें।

पार्वतीजी की इस प्रकार प्रार्थना सुनने के उपरान्त आशुतोष भगवान् शंकर अत्यन्त प्रसन्न होकर श्री पार्वतीजी को धन्यवाद अर्पण करते हुए श्री अवध को मानसिक प्रणाम करके परम पवित्र श्री अवध के प्राकट्य की कथा वर्णन करने लगे।

यस्याः पश्चिमतो नदः प्रवहति, ब्रह्मात्मजो घर्घरः।

सामीप्यं न जहाति यत्र सरयूः पुण्या नदी सर्वदा।।
विद्या यत्र महाधिका गिरिसुते स्थानं च विष्णोर्हरेः
साऽयोध्या विमला पुरी वरप्रदा स्याद्वः सदानन्ददा।। 1।।
सृष्ट् यादौ तु समुत्पन्ना त्रैलोक्ये च विराजिते।
नगरी निर्मिता पूर्वमीश्वरेण महात्मना।। 2।।
तदुत्पर्ति प्रवक्ष्यामि, श्रृणु त्वं च मनोहरे।
स्वायम्भुवो मनुर्नाम ब्रह्मणः प्रथमः सुतः।। 3।।
प्रजानां पालको राजा सत्यलोकं जगाम ह।
ब्रह्माणं च नमस्कृत्य विनयावनतः स्थितः।। 4।।
तं दृष्ट्वा राजशार्दूलं विनयेन विराजितम्।
ततः प्रहस्योवाचेदं ब्रह्मा लोकपितामहः।। 5।।

ब्रह्योवाच - सृष्टद्यर्थमागतो वत्स, किं कार्य वदमेऽग्रतः।
मनुरुवाच- सृष्टद्यर्थे ज्ञापितोऽहं वै तवाज्ञा प्रतिपालिता।।6।।
सृष्टद्यादौ वसतस्तात, स्थानं देहि मनोरमम्।
इति तस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मालोकपितामहः।।7।।
जगाम विष्णुलोकं च मनुना सह पार्वति।
उवाच प्राञ्जलिः प्रह्वो वाचा मधुरया तदा।।8।।
ब्रह्योवाच - देवाधिदेव देवेश भक्तानुग्रहकारक।
नगरं वसतिं देहि मन्वर्थे देवसत्तम।।9।।
इति तस्य वचः श्रुत्वावासुदेवो जनार्दनः।
वैकुण्ठ मध्ये यत्प्रोक्तमयोध्यानगरं शुभम्।।10।।
अनेकाश्चर्य संयुक्तं सर्वसम्पत्तिदं शुभम्।
दत्वा तु मनुहस्ते च ब्रह्मणा चानुमोदिताः।।11।।
आगतोमर्त्यलोके च विश्वकर्मसमन्वितौ।
वशिष्ठं प्रेषयामास पश्चातत्र जनार्दनः।।12।।
सुचारुक्ष्मायत्र दृश्याह्ययोध्यांतत्र कल्पय।
इतिविष्णोरादेशाच्चपुरी वै निर्मिताशुभा।।13।।
अयोध्या रचिता तेन सर्वदेव नमस्कृता।

श्री शंकर जी ने कहा- हे देवि! जिस अयोध्या के पश्चिम दिशा में ब्रह्माजी से उत्पन्न घर्घर नद सदा प्रवाहित है, जिस पुरी के निकट पुण्यों को बढ़ाने वाली श्री सरयू नदी सदा प्रवाहित हैं, जिसका सानिध्य सरयू नदी कभी भी त्याग नहीं करती, जहाँ पर भगवान् विष्णु नित्य निवास करते हैं और जो सर्व विद्याओं की खानि है वह सर्वश्रेष्ठा विमलापुरी श्री अयोध्या सबको मंगल प्रदान करें।

हे मनोहरे! उस दिव्य अवध की उत्पत्ति सम्बन्धी कथा को सावधानी से सुनो। सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माजी के मानस पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ स्वायम्भुव मनु हुए जो प्रजा पालन में अत्यन्त कुशल थे। वे एक समय सत्यलोक में गये और वहाँ पर श्री ब्रह्मा जी के समक्ष दण्डवत् करके हाथ जोड़े हुए विनम्र भाव से खड़े रहे। सर्वश्रेष्ठ महाराज मनु को विनम्र भाव से खड़े देखकर श्री ब्रह्माजी सुप्रसन्न होकर बोले- हे वत्स! सृष्टि के सम्बन्ध में कुछ आवश्यकता से प्रेरित होकर आये हो तो मुझसे स्पष्ट कहो, किस लिए तुम्हारा आगमन हुआ? मैं यह सुनना चाहता हूँ। तब श्रीमनुजी ने कहा-भगवन्! आपकी आज्ञा से प्रेरित हो हम सृष्टि कार्य करने में तत्पर तो अवश्य हैं पर इसके लिए सबसे प्रथम हमें स्वयं ठहरने का कोई समुचित स्थल होना आवश्यक है। जहाँ पर रहकर हम सृष्टि सम्बन्धी कार्य कुशलता पूर्वक कर सकें। यह सुनकर श्री ब्रह्माजी मनु को साथ लेकर वैकुण्ठनाथ के समक्ष श्रीविष्णु लोक में पहुँचे। वहाँ परम पिता वासुदेव जगदीश्वर की भक्ति पूर्वक ब्रह्माजी स्तुति करने लगे। हे देवाधि देव! भक्तों पर अनुग्रह करने वाले आप अब मुझ पर कृपा कर सृष्टि कार्य के सुचारू संचालन के लिए अपनी दिव्य कला-किरणों से सुसज्जित मेरे प्रिय स्वायम्भुव मनु के लिए कोई निवास स्थान प्रदान कीजिये। ब्रह्माजी की इस प्रकार की प्रार्थना सुनकर साकेताधिपति भगवान् वासुदेव कहने लगे - हे ब्रह्मन्! इस दिव्य श्री वैकुण्ठपुरी में अनेक आश्चर्यमयी सम्पत्तियों से युक्त परम पवित्र जो साकेत धाम है वहीं अयोध्या नगरी मनु के निवास के लिये यहाँ से मैं प्रदान करता हूँ। श्रीविश्वकर्मा इसके निर्माण कार्य में अत्यन्त कुशल हैं। उनके द्वारा भारत भूमि में यह प्रतिष्ठित होगी। तब ब्रह्माजी से आज्ञा प्राप्त कर वहाँ से

श्रीस्वायम्भुव मनु विश्कर्मा जी को साथ लेकर पुरी निर्माण के लिए भारत में आये। श्रीवशिष्ठ जी को भी श्रीविष्णु भगवान ने मनु के निकट भेज दिया और आज्ञा दिया कि आप वहाँ जाकर जहाँ की पृथ्वी अत्यन्त रमणीय हो, जो भूमि हमारे लीला-विहार के लिए समुचित हो, वहाँ ही इस अवध की स्थापना करवाइये और मनु के निकट रहकर इस पुरी की संरक्षकता और सूर्य वंश का पौरोहित्य आप करते रहें। तदनुसार श्री वशिष्ठजी ने अपनी अग्निहोत्रादिक समस्त क्रिया-कलापों के सहित यहाँ उपस्थित होकर श्री रामचन्द्र जू की लीला - स्थली को अच्छी तरह विचार कर विश्वकर्मा द्वारा मनोनीत रूप से इस अवधपुरी का सुन्दर निर्माण कार्य कराया। सब देवताओं से वन्दना पाने वाली श्री अयोध्यापुरी थोड़े ही समय में विष्णु भगवान् के आदेशानुसार विश्वकर्मा द्वारा रचकर तैयार हो गई। यह दिव्य पुरी अनेक दिव्य रत्नों के मण्डप और स्वर्ण कलशों से सुशोभित अत्यन्त रमणीय बनाई गई। रत्नों द्वारा पृथक्-पृथक् अनेक महल एवं निवास करने के लिए दिव्य राजभवन आदि बनाये गये। उसमें चारों तरफ से चहार दीवारियाँ (परकोटे) और सुन्दर तोरण पताका आदि मंगल चिन्हों से सजाये हुए निवासगृह अत्यन्त शोभा पा रहे थे। उसमें सम्राट् के स्वयं रहने के लिए सुवर्ण से रचित एक सुन्दर किला बना था जो कि चांदी तथा तांबे की दीवारों से घिरा हुआ और चारों तरफ परिखाओं द्वारा ऐसा सुरक्षित बनाया गया जो शत्रुओं के आक्रमण में कभी न आ सके। उसके समीप और भी बड़े-बड़े महल बनाये गये। राजभवन, खाई, उपवन और परिखा इत्यादि रत्नों के तोरणों से सुसज्जित कई एक छोटे बड़े स्वर्ण रत्नमय महलों से युक्त इस पुरी का सुन्दर निर्माण श्री विश्वकर्माजी ने बड़ी कुशलता से किया। यहाँ के सभी मन्दिर लोहे, चाँदी तथा सुवर्ण के बनाये गये और मूंगा, मुक्ता, पन्ना, नीलम, स्फटिक मणि से जटित बने हुए थे। वहाँ के प्रत्येक गृह के तोरण शोभा दे रहे थे। चारों ओर वहां की भूमि प्रकाशमयी थी और सुन्दर रत्नों से ही वहां के सब मार्ग उज्ज्वल प्रकाश पा रहे थे।

सब देवतागण जिसके चारों तरफ वन्दना करते हुए उपस्थित थे। उस पुरी में जनता के लिए एकत्रित होकर बोलने बैठने के निमित्त सभागृह,

भवन आदि अति सुन्दरता से कई एक बनाये गये थे। यह परम पवित्र अयोध्यापुरी दुष्कृतशील अर्थात् पापवान् प्राणियों के लिए अत्यन्त दुर्लभ कही गई है। साक्षात् श्री हरि जहाँ पर स्वयं जन्म ग्रहण करके लीला विलास करते हैं और जो श्रीहरि का नित्य निवास स्थान है भला उस पुरी का सेवन कौन प्राणी नहीं चाहेगा। श्री सरयू नदी इसके निकट उत्तर-बाहिनी होकर नित्य प्रवाहित हैं। सरयू तटवर्तिनी होने के कारण इस पुरी की शोभा अत्यन्त चित्ताकर्षक है। अनेक ऋषि मुनि महात्मागणों से संयुक्त होकर जो पुरी भारतवर्ष में सब तीर्थों का शीर्ष स्थान है, उस पुरी की महिमा भला कौन वर्णन कर सकता है? इतना कहकर भगवान् शंकर जी ने आगे क्रमशः अयोध्या के अन्तर्गत समस्त तीर्थों की स्थिति और माहत्म्य सुनाया।

श्रीअवध महिमा

चैत्रे मासि च सम्प्राप्ते नवमी दिनमाश्रितः।
योऽभिगच्छति वै भद्रे ह्ययोध्यां सरयूं प्रति।।
फलं तत्राक्षयं देवि भवतीत्यनुशुश्रुम।
सायं प्रातः स्मरेद्यस्तु ह्ययोध्यां च कृताञ्जलिः।।
उपस्पृष्टानि तीर्थानि त्वयोध्यायाश्चभामिनि।
विष्णोः पादमवन्तिकां गुणवतीं मध्यं च काँची पुरीं,
नाभि द्वारवतीं पठन्ति ह्दयं मायापुरीं योगिनः।।
ग्रीवामूल मुदाहरन्ति मथुरां नासां च वाराणसी-
मेतद्ब्रह्म पदं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरी मस्तकम्।।
जन्म प्रभृति यत्पापं स्त्रिया वा पुरुषस्य वा।
अयोध्या स्नान मात्रेण सर्वमेव प्रणश्यति।।
यथा सुराणां सर्वेषामादिश्च मधुसूदनः।
तथैव क्षेत्रतीर्थानामयोध्या त्वादिरुच्यते।।

श्री भगवान् शंकर जी ने श्री अवध की महिमा श्री पार्वती जी से वर्णन करते हुए बतलाया कि - हे देवि! चैत्र की शुक्ल नौमी तिथि में जो भी प्राणी अयोध्या में आकर श्री सरयू में स्नान करता है, वह अक्षय फल को

प्राप्त करते हुए श्रीरामभद्र का कृपा-भाजन अवश्य होता है। प्रातःकाल उठकर एवं सायंकाल शयन के पूर्व भक्ति पूर्वक हाथ जोड़कर श्री अवध को हृदय से स्मरण करते हुए जो प्राणी प्रतिदिन प्रणाम करते हैं वे वहीं बैठे ही अयोध्या के सम्पूर्ण तीर्थों के आचमन का फल पाते हैं। भगवान विष्णु के पुरीमय विग्रह में उज्जयिनी पुरी पादपद्म कांचपुरी (शिवकांची विष्णुकांची) मध्य भाग (कटि प्रदेश) है और द्वारका पुरी नाभि स्थान एवं मायापुरी (हरिद्वार) हृदय है, श्रीमथुरापुरी कण्ठ तथा श्रीवाराणसी (काशी) ही उनकी नासिका और यह श्री अयोध्या पुरी मस्तक स्थान है। इसीलिए सप्तपुरियों में सर्वश्रेष्ठा परा-मुक्तिदात्री मुनियों ने इसे कहा है। स्त्री हो या पुरुष जन्म से लेकर आज पर्यन्त कितने भी पाप क्यों न किये हों, श्रीअवध का दर्शन होते ही उनके सब पाप समूल नष्ट हो जाते हैं। जैसे देवताओं में सर्वश्रेष्ठ मधुसूदन हैं उसी प्रकार तीर्थों में श्रीअयोध्यापुरी प्रमुख है। पवित्रता पूर्वक नियमित आहार करते हुए द्वादश रात्रि अयोध्या में निवास करने पर सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त कर प्राणी स्वर्गलोक को जाता है, सैकड़ों वर्ष यज्ञ करने पर जो फल होता है, श्रीअयोध्या में एक रात्रि निवास करने पर उससे कोटि गुना फल अधिक प्राप्त होता है। श्रीअयोध्या में पहुँचकर कुछ दान करना तथा वहां विशुद्ध भाव से निवास करना यह और भी उत्तम है। द्वादश रात्रि उपवास पूर्वक अथवा संयमित आहार करके 'सीमान्त अयोध्या की प्रदक्षिणा' करने पर जम्बूदीप की समस्त प्रदक्षिणा का फल उसे मिलता है। यहाँ एक रात्रि निवास करने वाला भी पूतात्मा होकर अश्वमेध यज्ञ फल का भागी होते हुए सर्वकाम की सिद्धि पाता है उसकी दुर्गति कभी नहीं होती तथा उसे दिव्य देह की प्राप्ति होती है। यह सब श्रीअयोध्या दर्शन का अद्भुत महत्व है, जो कि संक्षेप में मैंने तुम्हें सुनाया है। वस्तुतः श्रीअयोध्या ही परब्रह्म स्वरूप एवं सरयू उनका सगुण साकार रूप यहाँ प्रवाहित है और यहाँ के सभी निवासीजन साक्षात् जगन्नाथ श्रीरामभद्रजी के स्वरूप हैं। यह त्रिसत्य मैं तुम्हें कहता हूँ इसे ध्रुव समझकर धारण करना चाहिए।

सरयू उत्पत्ति

श्रीपार्वतीजी ने भगवान् शंकर से निवेदन किया कि 'हे भक्तों पर अनुग्रह करने वाले देवाधिदेव, आप अब कृपाकर श्री सरयूजी की उत्पत्ति

सम्बन्धी कथा का वर्णन कर सुनावें। समस्त मुनिगण इस समय इस कथा को श्रवण करने हेतु अत्यन्त लालायित हैं

भगवान् शंकर बोले-हे देवि! श्रीसरयू देवी ने अपने ही मुख से अपनी उत्पत्ति का जो वर्णन किया है उसीको मैं तुम्हें सुनाता हूँ।

एक समय बाल-स्वरूप क्रीड़ा-प्रिय श्रीरामचन्द्र जी ने अपने भ्राता व सखाओं सहित दुर्ग द्वार पर क्रीड़ा करते हुए वेत्रधारियों से पूछा कि पूज्य श्रीपिताजी इस समय कहाँ हैं। वहीं हम सब अविलम्ब जाना चाहते हैं। वेत्रधारियों ने हाथ-जोड़कर कहा कि महाराज चक्रवर्तीजी इस समय श्रीसरयू स्नान के लिए गये हैं। आपकी यदि दर्शन की अत्यन्त इच्छा हो तो वहाँ ही चलिये। यह सुनकर श्रीरामचन्द्र जी ने बार-बार वहीं ले चलने के लिए कहा और शीघ्र ही सब नर-नारियों का हर्ष-वर्धन करते हुए सरयू तट पर श्रीचक्रवर्तीजी के समक्ष जा पहुँचे। महाराज दशरथजी श्रीसरयूजी में स्नानकर सन्ध्यादि पूजनान्त कृत्यसे अवकाश पा वशिष्ठ आदि मुनियों के सहित गृह आने को प्रस्तुत ही हो रहे थे कि इतने में दौड़ते हुए दूतों ने आकर भ्राताओं सहित श्रीरामचन्द्र जी के आगमन की सूचना दी। चक्रवर्ती महाराज प्रसन्न हो प्रतीक्षा में ठहर गये। श्रीरामचन्द्र जी वहाँ पिता की गोद में आ बैठे और समस्त बन्धु-बान्धव सहित आमात्य वर्ग सामने सुन्दर आसनों पर बैठ गये। तब श्री चक्रवर्तीजी श्रीरामचन्द्रजी से बोले कि हे वत्स! श्रीसरयू अम्बा को सादर दण्डवत् करो। रामजी सब बालकों सहित आज्ञानुरूप साष्टांग प्रणाम कर पुनः यथा स्थान बैठ गये। उपरान्त महाराज श्रीचक्रवर्तीजी ने सरयू अम्बा का दिव्य स्तवन किया जो इस प्रकार है-

श्रीसरयू अष्टक

नमस्ते सरयू देवि वशिष्ठ तनये शुभे।
ब्रह्मादि सकलैर्देवैर्ऋषिभिर्नारदादिभिः।।1।।
सदा त्वं सेविता देवि तथा सुकृतिभिर्नरैः।
मानसाच्च समायाते जगतां पाप हारिणि।।2।।
स्मरतां पश्यतां देवि पापनाशे पटीयसि।
ये पिबन्ति जलं देवि त्वदीयं गतमत्सराः।।3।।

स्तनपानं न ते मातुः करिष्यन्ति कदाचन।
मनु प्रभृतिभिर्मान्यैमानितासि सदा शुभे।।4।।
त्वत्तीर मरणेनैव त्वन्नाम रटनेन च।
ये त्यजन्ति तनुं देवि ते कृतार्था न संशयः।।5।।
त्वं तु नेत्रोभ्दवा देवि हरेर्नारायणस्य हि।
महिमा तव देवैश्च गीयते च मुहुर्मुहुः।।6।।
तत्र का हि मनः शक्तिः स्तवने मानुषस्य च।
त्वत्तीरे सर्व तीर्थानि निवसन्ति चतुर्युगे।। 7।।
नमो देवि नमो देवि पुनरेव नमो नमः।
हे वाशिष्ठि महाभागे प्रणतं रक्ष बन्धनात्।।8।।

श्रीदशरथ जी हाथ जोड़कर बोले - हे वशिष्ठ पुत्री श्रीसरयू देवि, आपको मेरा सतत् नमस्कार है। ब्रह्मा आदि देवताओं तथा नारदादि ऋषियों एवं सुकृतिमानजनों से आप सदा सेवित हैं। सांसारिकजनों के पापों का नाश करने के लिये आप मान सरोवर से भूमि तल पर आई हैं। हे देवि! दर्शन करने वाले एवं स्मरण करने वाले प्राणियों के पाप नाश में आप परम कुशला हैं। मत्सरहीन प्राणी आपके पवित्र जल को पानकर पुनः माता का स्तन पान नहीं करते। मनु आदिक महामान्यजनों द्वारा आप सदा से सम्मानित रहीं। आपके तट पर मरने वाले प्राणी तथा नाम रटन पूर्वक शरीर त्याग करने वाले जन निश्चय ही कृतार्थ होते हैं। हे देवि! नारायण हरि के कमल नेत्रों द्वारा आपका प्राकट्य हुआ, अतएव आपकी महिमा बारम्बार देवताओं द्वारा गायी जाती है उस दिव्य महिमा के वर्णन में मनुष्य कहाँ तक समर्थ हो सकता है? आपके तट पर चारों युगों में सम्पूर्ण तीर्थों का निवास रहता है। इसलिए हे देवि! आपको बार-बार मेरा प्रणाम है। हे वशिष्ठ नन्दिनी! मुझ प्रणत की भव-बन्धन से आप रक्षा करें।

यह समस्त बालक आपकी शरण हैं, आप इनकी रक्षा अपने तट पर भली-भांति करें। इस प्रकार श्रीसरयू की स्तुति करने के उपरान्त भव्य पुत्रों के पूर्ण अभ्युदय के लिए ब्राह्मणों को लक्ष सुवर्ण मुद्रा पत्रों द्वारा दान दिया गया। महाराज श्रीचक्रवर्ती के स्तवन व दान से सन्तुष्ट हो, काम-रूपिणी

शरीर-धारिणी सरयू अम्बा तट पर ही कुमारों के समक्ष प्रगट हुईं। तत्काल बालकों सहित श्रीचक्रवर्तीजी ने श्रीसरयू अम्बा के चरण-स्पर्श किये। माता सरयू आशीर्वाद प्रदान करती हुई श्रीरामचन्द्र जू को अपनी गोद में बिठाकर दिव्य मोतियों की माला श्रीरामजी को पहना दी तथा प्रेम-पूर्वक उनके मस्तक को आघ्राण (सूंघ) कर राजा दशरथ से बोली, 'हे राजन्! ये दिव्य बालक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड - वासियों के इष्ट स्वरूप हैं और सदा ही मेरी गोद मे बसते हैं। इनका ज्ञान चक्षु से दर्शन करो। तुम्हारा किया हुआ यह स्तवन जो सज्जन श्रद्धा पूर्वक पाठ करेंगे, वे सम्पूर्ण तीर्थ स्नान फल के भागी बनेंगे। इतना कर कर तत्काल ही सरयू देवी ने अपनी कुक्षिगत नित्य स्थित श्रीरामजी का दर्शन कराया। दर्शन करते ही राजा दशरथ परम आश्चर्यान्वित हुए। महाराज दशरथ ने प्रणाम करके श्रीसरयू अम्बा से उनकी उत्पत्ति कथा पूछी। श्रीसरयू अम्बा गम्भीर स्वर से राजा दशरथ को अपनी उत्पत्ति की कथा बताने लगीं।

सृष्टि के आदि में ब्रह्माजी विष्णु के नाभि कमल से उत्पन्न हुए। वे विष्णु द्वारा आदिष्ट हो तप में तत्पर हुए। दिव्य सहस्रों वर्ष वायु संरोध पूर्वक कोटि मन्मथ सम सुन्दर भगवद् ध्यान में निमग्न रहे। आज्ञानुसार सेवामें लगे हुए ब्रह्माजी के लिए लक्ष्मीपति भगवान् गरुड़ पर चढ़कर उनके समक्ष उपस्थित हुए। अपने में दृढ़ भक्ति देखकर श्रीहरि के कृपा परिपूर्ण नेत्रों से सहसा जल धारा बह चली। उस जल धारा को निज कर-कमलों में धारणकर पदनाभ ब्रह्मा को कृपा पूर्वक स्पर्श किया। कर-कमलों के सुशीतल स्पर्श से ब्रह्मा का ध्यान टूटा। नेत्र खोलकर सामने चक्रपाणि भगवान् विष्णु का दर्शन पाकर दण्डवत् प्रणाम कर ब्रह्माजी उस दिव्यरूप परम माधुर्य-सौन्दर्य को पान करने लगे। उन्होंने विष्णु के करुणापूर्ण नेत्रों से उत्पन्न जल को कर-कमलों में धारण कर अपने ही प्रिय कमण्डलु में रख लिया। उपरान्त चारों मुखों से जगन्निवास सर्वाधीश्वर भगवान् विष्णु की स्तुति करने लगे। उस स्तुति से भगवान् परम प्रसन्न होकर ब्रह्मा को इच्छित वरदान दे अपने दिव्य धाम को गये ब्रह्मा जी ने उस जल को साक्षात् ब्रह्म द्रव समझकर ध्यान योग से मानसरोवर की रचना कर उसमें ही उस

दिव्य जल की स्थापना की। कालान्तर में सप्तम मनु श्रीश्राद्धदेव जी महाराज के ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु महाराज के शासनकाल में प्रभु प्रेरणा से वशिष्ठ मुनि ने हिमालय पर्वत पर जाकर शंकर जी की आराधना करके मानसरोवर से पूर्व प्रतिष्ठित दिव्य ब्रह्म द्रव को नदी रूप से प्राप्त किया। विष्णु के नेत्र कमल से उत्पन्न होने के कारण नेत्रजा, मानसरोवर से निस्सरित होने से सरयू, वशिष्ठ जी की अनुगामिनी होकर भूतल पर अवतीर्ण होने के कारण वाशिष्ठी एवं श्रीरामचन्द्र जी के सम्पर्क से रामगंगा आदि नामों से मैं प्रसिद्ध हुई। अतः मेरे कुक्षिगत निरन्तर श्रीरामभद्र जू का निवास समझकर जो लोग स्नान, ध्यान पूजन मुझमें करते हैं, उनको सम्पूर्ण ऐहिक फलों को प्रदान करती हुई मैं मुक्ति दान करती हूँ। सच्चिदानन्द, द्वन्द्वातीत श्रीराम ही परमब्रह्म हैं। भक्तों के रक्षार्थ, दुष्टों के बधार्थ ही तुम्हारी पूर्व तपस्या से सन्तुष्ट हो तुम्हारे गृह में कृपा पूर्वक अवतीर्ण हुए हैं। इस प्रकार अपनी कथा कह अम्बा सरयू सबके देखते ही देखते अदृश्य हो गईं। समस्तजन आश्चर्य से चकित हो राजा दशरथ तथा सरयू नदी को धन्यवाद देते हुए अपने-अपने आश्रम को गये। महाराज दशरथ सरयू नदी की घटना गुरुदेव वशिष्ठ को सुनाकर अपने भाग्य की सराहना करने लगे।

सरयू माहात्म्य

मन्वन्तर सहस्त्रैस्तु काशीवासेन यत्फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते।।
या गतिर्योगयुक्तानां वाराणस्यां तनुत्यजाम्।
सा गतिः स्नान मात्रेण सरय्वां हरि वासरे।।
पुष्करे तु नरो गत्वा कार्तिक्यां कृत्तिका दिने।
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते।।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि भागीरथ्यवगाहनात्।
तत्फलं समवाप्नोति दृष्ट्वा दाशरथीं पुरीम्।
निमिषंनिमिषार्ध वा प्राणिनां रामचिन्तनम्।
यत्र कुत्रस्थितो जीवो ह्ययोध्यां मनसास्मरेत्।।
न तस्य पुनरावृतिः कल्पान्तर शतैरपि।।

जल रूपेण ब्रह्मैव सरयू मोक्षदा सदा।।
नैवात्र कर्मणां भोगो रामरूपो भवेन्नरः।।

श्री शंकर जी पार्वती जी से बोले- सहस्रों मन्वन्तर तक काशी वास एवं पुष्कर तीर्थ स्नान का फल, करोड़ों वर्ष उज्जयिनी पुरी के सेवन का फल और साठ हजार वर्ष भागीरथी गंगा स्नान का जो फल है वह सरयू दर्शन मात्र से इस अयोध्या पुरी में प्राणियों को सुलभ है। इस पुरी में जहाँ कहीं भी क्षणकाल एकाग्रचित से प्रभु श्रीराम के पाद-पद्मों का चिन्तन करता हुआ जो कोई काल-यापन करता है, वह फिर आवागमन रूप यन्त्रणा में नहीं पड़ता। जल रूप से साक्षात् ब्रह्म ही सरयू धारा रूप से प्रवाहित है, अतः यहाँ पर शुभाशुभ कर्मों का फल भोग भविष्य जन्मकारक न होकर अन्त में रामरूप ही बना देता है।

श्री सरयू अम्बा का महोत्सव वार्षिकी यात्रा ज्येष्ठ की पूर्णिमा तिथि में यहाँ स्वर्गद्वार पर श्रीचन्द्रहरि के सामने घाट पर होती है। इसी दिन दशरथ जी को यहाँ सरयू अम्बा ने दर्शन दिया था एवं वशिष्ठ जी के द्वारा भूमितल पर अवतीर्ण होने की भी शुभ तिथि यही है।

अयोध्या के विशेष दर्शनीय स्थान

'श्री हनुमान गढ़ी'

राजद्वारे हनूमांस्तु वायुपुत्रो महाबलः।
महावीर इति ख्यातः, सर्वलोकेषु पूजितः।।
तस्य पूजा प्रकर्तव्या नरैर्नारीभिरेव च। (रु0या0)
उल्लंध्य सिंधोः सलिलं सलीलं, यःशोक वन्हिर्जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लंकां, नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम्।।

श्रीहनुमानजी वर्तमान अयोध्या के राजा हैं। अयोध्या रेलवे स्टेशन से लगभग 1 किलोमीटर उत्तर तथा सरयू पुल से दो किलोमीटर दक्षिण ठीक अयोध्या नगर के मध्य में राजद्वार के सामने श्रीहनुमानजी महाराज का छोटा-सा किला है, जो कि हनुमान गढ़ी के नाम से विख्यात है। लगभग सत्तर सीढ़ियों को चढ़कर देशके कोने-कोने से अयोध्या दर्शनार्थ आने वाले यात्रीगण श्रीहनुमान जी का दर्शन पाकर कृतार्थ होते हैं। आज से प्रायः तीन सौ वर्ष पूर्व इस मन्दिर का निर्माण श्रीस्वामी अभयराम दासजी ने कराया था। आज भी पंच श्रीरामानन्दी निर्वाणी अखाड़ा अपनी पंचायत द्वारा निर्मित आचार संहिता के अनुरूप इसका भलीभांति संचालन कर रहा है। इस विशालकाय मन्दिर के अन्तर्गत लगभग 500 सौ सन्त सदानिवास करते हैं और वे नागा की उपाधि से अलंकृत चार पट्टियों में विभाजित हैं। जिनमें बड़े-बड़े भजनानन्दी संत, पहलवान, विद्वान, कलाकार, रामायणी तथा सिद्ध महात्मा हैं। यहाँ एक ओर पहलवानों के लिए विख्यात अखाड़ा है तो दूसरी ओर प्रथम श्रेणी का संस्कृत महाविद्यालय। गौवों की सेवा के लिए गौशाला एवं भिक्षुकों के लिए खिचड़ी बाँटनें की परिपाटी प्राचीनकाल से चली आ रही है। समाजवाद एवं समानाधिकार की जो स्थिति यहाँ वर्तमान है उसका उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। मन्दिर से सम्बन्धित सन्त लगभग पूरी अयोध्या में फैले हुए हैं। किला की ऊपरी छत पर पहुँचकर आसानी से पूरी अयोध्या

का दर्शन किया जा सकता है। यों तो यहाँ नित्य दर्शन किया जाता है, किन्तु मंगलवार एवं शनिवार के दिन भक्तों की भीड़ सर्वाधिक होती है।

रुद्रयामल के अनुसार हनुमान गढ़ी का वर्णन एवं स्तुति इस प्रकार है-

मनोजवं मारुततुल्यवेगं,
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं,
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।
अञ्जनानन्दनं वीरं जानकी शोक नाशनम्।
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लंका भयंकरम्।।
इति मन्त्रं समुच्चार्य प्रणमेद्दण्डवत् सुधीः।।
धूपं दीपञ्च नैवेद्यं दत्वा चैव विधानतः।।

अर्थात्- राजद्वार पर महा बलवान् वायुपुत्र सर्वलोक से पूति 'श्रीमहावीरजी' हनुमान गढ़ी के नाम से प्रसिद्ध हैं। उनकी पूजा यथाविधि नर-नारियों को करनी चाहिए।

हनुमान गढ़ी से कुछ दूर पूर्व दिशा की ओर 'हनुमानकुण्ड' है। उसमें स्नान कर हनुमानजी की पूजा करने की प्रशस्ति है। हनुमान गढ़ी का वार्षिक पर्व (हनूमज्जयन्ती) कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को बड़े समारोह के साथ यहाँ आयोजित होता रहता है जो दर्शनीय है।

मंगल मूरति मारुति नन्दन।
सकल अमंगल मूल निकंदन।।
प्रणवौं पवन कुमार, खलबन पावक ज्ञानघन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम सर चाप धर।।

श्रीहनुमत्कृत जानकी स्तुतिः

जानकीं त्वां नमस्यामि सर्वपाप प्रणाशिनीम्।
दारिद्र्यऋणसंहर्त्रीं भक्तानामिष्टदायिनीम्।।
विदेह राजतनयां राघवानन्दकारिणीम्।
भूमेर्दुहितरं विद्यां नमामि प्रकृतिं शिवाम्।।

पौलस्त्यैश्वर्य संहर्त्री भक्ताभीष्टां सरस्वतीम्।
पतिव्रता धुरीणां त्वां नमामि जनकात्मजाम्।।
अनुग्रहपरामृद्धिमनघां हरिवल्लभाम्।
आत्मविद्यांत्रयी रूपामुमा रूपां नमाम्यहम्।।
प्रसादाभिमुखी लक्ष्मीं क्षीराब्धि तनयां शुभाम्।
नमामि चन्द्रभगिनीं सीतां सर्वांगसुन्दरीम्।।
नमामि धर्म निलयाम् करुणां वेदमातरम्।
पद्मालयां पद्महस्तां विष्णु वक्षःस्थलालयाम्।
नमामि चन्द्रनिलयां सीतां चन्द्रनिभाननाम्।
आह्लादरूपिणीं सिद्धिं शिवां शिवकरीं सतीम्।।
नमामि विश्वजननीं रामचन्द्रेष्ट वल्लभाम्।
सीतां सर्वानवद्यांगीं भजामि सततं ह्रदा।।

(स्क0पु0 46 / 50 / 57)

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिशय प्रिय करुणा निधान की।।
ताके युग पद कमल मनावौं।
जासु कृपा निर्मल मति पावौं।।

(श्रीरामचरित मानस)

श्रीहनुमत्कृत श्रीराम स्तुतिः

नमो रामाय हरये विष्णवे प्रभविष्णवे।
आदि देवाय देवाय पुराणाय गदाभृते।।
विष्टरे पुष्पके नित्यं निविष्टाय महात्मने।
प्रह्वष्ट वानरानीक जुष्ट पादाम्बुजायते।
निष्पिष्ट राक्षसेन्द्राय जगदिष्ट विधायिने।
नमः सहस्र शिरसे सहस्र चरणाय च।
सहस्राक्षाय शुद्धाय राघवाय च विष्णवे।
भक्तार्ति हारिणे तुभ्यं सीतायाः पतये नमः।
हरये नारसिंहाय दैत्यराज विदारिणे।

नमस्तुभ्यं वराहाय दंष्ट्रोद्धृत वसुन्धरे।।
त्रिविक्रमाय भवते बलि यज्ञ विभेदिने।
नमो वामन रूपाय नमो मन्दर धारिणे।।
नमस्ते मत्स्य रूपाय त्रयी पालन कारिणे।
नमः परशुरामाय क्षत्रियान्त कराय ते।।
नमस्ते राक्षसघ्नाय नमो राघव रूपिणे।
महादेव महाभीम महाकोदंड भेदिने।।
क्षत्रियान्तकरक्रूर भार्गव त्रास कारिणे।
नमोऽस्त्व हिल्यासंताप हारिणे चाप हारिणे।
नागायुत वलोपेत ताटका देह हारिणे।
शिला कठिन विस्तार वालिवक्षो विभेदिने।
नमो माया मृगध्वंस कारिणेऽज्ञान हारिणे।
दशस्यन्दन दुःखाब्धि शोषणागस्त्य रूपिणे।।
अनेकोर्मि समाधूत समुद्रमद हारिणे।
मैथिली मानसाम्भोज भानवे लोक साक्षिणे।।
राजेन्द्राय नमस्तुभ्यं जानकी पतये हरे।
तारक ब्रह्मणे तुभ्यं नमो राजीव लोचन।।
रामाय राम चन्द्राय वरेण्याय सुखात्मने।
विश्वामित्र प्रियायेदं नमः खर विदारिणे।।
प्रसीद देव देवेश भक्तानामभयप्रद।
रक्ष मां करुणा सिन्धो रामचन्द्र नमोस्तुते।।
रक्ष मां वेद वचसा मप्यगोचर राघव।
पाहिमां कृपया राम शरणं त्वामुपैम्यहम्।।
रघुवीर महामोहमपाकुरु ममाधुना।
स्नाने चाचमने भुक्तौ जाग्रत्स्वप्न सुषुप्तिषु।।
सर्वावस्थासु सर्वत्र पाहिमां रघुनन्दन।
महिमानं तवस्तोतुं कः समर्थो जगत्त्रये।।
त्वमेव त्वन्महत्त्वं वै जानासि रघुनन्दन।

अतस्ते शरणं यामि सर्वभावेन सर्वदा।।

(स्क0पु0व्रा0से0मा0 46 ।31-49)

बन्दौं बाल रूप सोइरामू। सबसिधि सुलभ जपत जिस नामू।।
पुनि मन वचन करम रघुनायक। चरण-कमल बन्दौ सब लायक।।
राजिव नयन धरे धनुसायक। भगत विपति भंजन सुखदायक।।
बन्दौं राम नाम रघुवर को। हेतु कृशानु भानु हिमकर को।।
मन्त्र महामणि विषय व्याल के। मेटत कठिन कुअंग भालके।।

(रा0च0मा0)

श्रीराम-जन्मभूमि

एवं सम्पूज्य विधिवज्जन्म भूमिं व्रजेन्नरः।
विध्नेश्वरात्पूर्वभागे वशिष्ठाच्चोत्तरे तथा।।
लोमशात्पश्चिमे भागे जन्म स्थानं तु तत्स्मृतम्।
धनुः पञ्चाशतादूर्ध्व स्थानं वै लोमशस्थलात्।।
विध्नेश्वरात्सहस्राष्टावूनं तच्च धनुः शतम्।
मध्ये तु राज भवनं ब्रह्मणा निर्मितं स्थलम्।।
जन्मस्थानमिदं प्रोक्तं मोक्षादि फलदायकम्।
यद् दृष्टवा च मनुष्यस्य गर्भ वासक्षयो भवेत्।।
विनादानेन तपसा विना तीर्थैर्विना मखैः।
नवमी दिवसे प्राप्ते व्रतधारी तु मानवः।।
स्नान दान प्रभावेण मुच्यते जन्मसंकटात्।।

श्रीशंकरजी ने पार्वती जी से श्रीरामजन्मभूमि की यात्रा एवं पूजन-विधि वर्णन करते हुए बतलाया कि यहाँ आकर बालस्वरूप श्यामसुन्दर बालमुकुन्द श्रीरामजी का स्मरण करते हुए प्रथम भूमि को साष्टांग प्रणाम करें। इसके बाद वर्णित विधि के अनुसार वहाँ पूजन करना चाहिए। विध्नेश्वर से पूर्व दिशा में वशिष्ठ कुण्ड से उत्तर लोमशजी से पश्चिम तरफ श्रीरामजी का जन्म स्थान वर्णित है। यह स्थान चैत्र मास शुक्ल नवमी को प्रधानतः दर्शनीय है। जिसका दर्शन कर मनुष्य पुनः

गर्भवास में नहीं आता। दार्शनकारी को बिना दान बिना तप बिना यज्ञ किये ही चतुर्वग फल देने में यह दक्ष है। भक्तों को चाहिए कि चैत्र शुक्ल नवमी पुनर्वस नक्षत्र युक्त तिथि में श्रीरामजी की प्रसन्नता हेतु भक्ति पूर्वक उपवास करके यहाँ रात्रि जागरण एवं पूजन तर्पण सविधि करे। रामनवमी तिथि मे जो लोग मूढ़तावश अन्न भोजन करते हैं। भविष्य में वे घोर कष्टप्रद नरक भोगते हैं। श्रीराम नाम परायण होकर इस व्रत का आचरण करने वाले जन धन्य हैं और जिस तिथि में स्वयं हरि प्रकट हुए वह नवमी तिथि धन्यतमा है। अष्टमी से वेधित नवमी व्रत वैष्णवों के लिए वर्जित है। नवमी व्रत वालों को दशमी तिथि में पारण कर्तव्य है। जो लोग महोत्सव पूर्वक रामनवमी का व्रत करते हैं, वे पुण्यात्मा देवताओं से सेवित अक्षय भगवद्धाम को जाते हैं।

ध्यानम्- **मातुरंकयं राममिन्द्रनीलमणि प्रभम्।**
कोमलांग विशालाक्षं विद्युद्वर्णाम्बरावृतम्।।
भानुकोटि प्रतीकाशं किरीटेन विराजितम्।
रत्नग्रेवेय केयूर रत्न कुण्डल मण्डितम्।।
रत्नकाञ्चनमञ्जीर कटिसूत्रैरलङ्कृतम्।
श्रीवत्स कौस्तुभोरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम्।।

इस प्रकार ध्यान करके साधक अपने सिर पर चन्दन युक्त पुष्प रख मानसोपचार द्वारा हृदय में रामभद्र जू की प्रथम पूजा करने के उपरान्त कच्छप मुद्रा से पुनः ध्यान को पढ़ते हुए सामने षट्कोणात्मक रचित पीठ स्थान पर (पात्र में) पुष्प देकर देवाधिदेव को आवाहन कर युगल वस्त्र सहित नाना अलंकारों में उन्हें सुसज्जित करके पंचोपचार, दशोपचार अथवा षोडशोपचार यथाशक्ति सामग्री से पूजन करे। पूजन में 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशाक्षर मन्त्र यहाँ प्रयुक्त है। अर्घ्य प्रदान करने के लिए विशेषता अशोक पुष्प की है। अशोक पुष्प युक्त अर्घ्य राघवेन्द्र को यहाँ देना चाहिए।

मन्त्र यथा- **ओं दशाननवधार्थाय धर्म संस्थापनाय च।**
दानवानां विनाशाय दैत्यानांनिधनाय च।।
परित्राणाय साधूनां जातोरामः स्वयं हरिः।

गृहाणार्घ्यं मयादत्तं भ्रातृभिः सहितोऽनघ।।

इस मन्त्र को पढ़कर राघवेन्द्र के लिए अर्घ्य अर्पण करना उचित है। देवाधिदेव की अनुज्ञा से परिवार एवं आवरण देवताओं का षट्कोण यंत्र में पूजन करना कर्तव्य है। उसमें इन्द्रादि, दिग्पाल, वशिष्ठ आदि मुनि, सुमन्त्रादि मन्त्री, हनुमानादि पार्षद, वज्रादि अस्त्र एवं आधार शक्त्यादि पीठ और विमलादि पीठ शक्तियों का पूजन करते हुए वाम एवं दक्षिण भाग स्थित धनुष तथा बाण षडगो का पूजन करना उचित है। संक्षेप रीति से पुष्प चन्दन तो सबको देना ही चाहिए। प्रधान की पूजा प्रधानतया उक्त उपचारों द्वारा की जाय। इस प्रकार पूजन करके पुराणों का श्रवण स्तोत्र पाठ या वेदों का पारायण कर्तव्य है। भावावेश में श्रीराम प्रीत्यर्थ वहाँ पर नृत्य भगवद्गीत वाद्यादि द्वारा करें, उत्सव पूर्वक रात्रि का शेष भाग जागरण में ही व्यतीत करें। यहाँ श्रीरामजी का पूजन मध्य दिवस से लेकर प्रतियाम करते हुए अष्टयाम सेवा करना प्रशस्त है, जो कि द्वितीय दिवस मध्याह्न में ही जाकर पूर्ण सिद्ध होता है। प्रातःकाल सरयू स्नान करके सन्ध्या-तर्पण आदि (द्विजाति मात्र) करने के बाद मूल मन्त्र द्वारा इष्ट स्वरूप श्रीरामजी का मानसपूजन करने के उपरान्त दशमी के दिन राम नवमी व्रत करने वाले भक्त, ब्राह्मण, वैष्णवों को पूजन का प्रसाद फल नैवेद्यादि प्रदान कर (सन्तुष्ट कर) पश्चात् बच्चों को दें। अनन्तर स्वयं प्रसाद ग्रहण करें। उस दिन भोजन एक ही बार पवित्र हविष्यादि करना चाहिए तथा दिन में निद्रा न लेवें। व्रत से पूर्व दिन एवं पर दिन इस नियम की रक्षा करने पर व्रत का पूर्ण फल होता है। साधारणतः सभी व्रतों में इन नियामों का आदर है, इसे पूर्ण ध्यान में रखना चाहिए।

श्रीशंकरजी ने इस व्रत का माहात्म्य इस प्रकार कहा है-

शिव उवाच- तस्य व्रत प्रभावेण सरयू स्नानतः पुनः।

दर्शनाद्राम देवस्य जन्म भूमेर्विलोकनात्।।

पापिनस्तु गमिष्यन्ति साकेतं राम जन्मनि।

गतपापा भविष्यन्ति कलिकाले तु पामराः।

जन्म भूमेस्तु माहात्म्यं वक्तुं शक्तो न पद्मजः।

पाप कोटि समायक्तो चैत्रे च नवमी तिथौ।।
प्राप्नोति परमं लोकं यत्र गत्वा न शोचति।

हे देवि! उस नवमी व्रत के प्रभाव से एवं सरयू स्नान पूर्वक श्रीराम-जन्मभूमि के दर्शन से अत्यन्त पापीजन भी निष्पाप होकर साकेत लोक को प्राप्त होते हैं। विशेष कर कलिकाल में पामरों को यही भूमि शरण लेने योग्य है जिसकी महिमा पूर्णतः ब्रह्माजी भी कहने में असमर्थ हैं।

श्रीराम-जन्मभूमि का शास्त्रीय-अनुसंधान करते हुए महाराज विक्रमादित्यजी ने इस पवित्र भूमि की मान्यता सुरक्षित रखने के लिए अपने शासनकाल में यथेष्ट धन-राशि लगाकर सुदृढ़ एवं विशाल श्रीराम मन्दिर यहाँ निर्माण कराया था। इसमें कसौटी पत्थरों के बहुमूल्य स्तम्भ कलाकारिता से संयुक्त लगवाये गये थे। यवन शासनकाल तक उक्त मन्दिर अपने स्वरूप में था। बाबर शाह ने उसे रूपान्तरित करने का भरसक प्रयत्न किया और मन्दिर को छिन्न-भिन्न कर आपत्तिग्रस्त करने की कुचेष्टा की। काल पाकर आर्य संस्कृति ने इस पवित्र भूमि की मान्यता मन्दिर के रूप में देकर श्रीरामभद्र की जन्मभूमि की संस्मृति सर्वथा सुरक्षित की। यहाँ पर विक्रमकालीन कसौटी के कतिपय स्तम्भ अद्यावधि विद्यमान हैं जो दर्शनीय हैं।

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दशरथ अजिर बिहारी।
मोरि सुधारिहि सो सबभांती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती।

श्रीकनक भवन

तस्मादुत्तर दिग्भागे स्थानं चैव मनोहरम्।
सीतायाः भवनंदिव्यं नाम्ना कनकमण्डपम्।।
यत्र वै जानकी देवी सखीभिः परिवारिता।
तत्र गत्वा नरोधीमान् पूजां चैव तु कारयेत्।।
धूपं दीपं च नैवेद्यं मन्त्रेणानेन कारयेत्।

मन्त्र- 'आद्यांशक्तिं दुराधर्षां नित्य पुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्व भूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्'

रत्न मण्डप के निकट उत्तर भाग में सुमनोहर कनक मण्डप (कनक भवन) श्रीसीताजी का अन्तःपुर है। जहाँ दिव्य शयनागार है एवं सीतारामजी का शयन कुंज दर्शनीय है। वहाँ पर सखियों सहित श्रीजनकनन्दिनीजी की आराधना पूर्ण श्रद्धा से करनी चाहिए, जिसमें धूप, दीप, नैवेद्यादि अर्पण करने के लिए उपर्युक्त 'आद्यांशक्तिम्' मन्त्र प्रयोग में लाना चाहिए। उपरान्त प्रसन्न चित्त से करबद्ध स्तुति करें।

यथा- **वन्दे विदेह तनया पद पुण्डरीकं।**

कैशोर सौरभ समाह्वत योगिचित्त्म्।।

हन्तुंत्रिताप मनिशं मुनिहंस सेव्यं।

सम्मानशालि परिपीत पराग पुञ्जम्।।

उक्त मन्त्र पढ़ते हुए श्रीसीतारामजी को साष्टांग प्रणाम करें। यह 'कनक भवन' समस्त दर्शनीय स्थानों से अधिक चित्ताकर्षक है। दर्शनार्थीजन यहाँ दर्शन करके कृतार्थ होते हैं। भावुक भक्तजन एवं सन्तजनों की यह नित्य सेव्य भूमि है। पूर्व मन्दिर के अति जीर्ण होने पर उसका जीर्णोद्धार कराते हुए पुनः नव मन्दिर निर्माण कराकर वर्तमान समय में समस्त प्रबन्ध टीकमगढ़ स्टेट की ओर से सुचारू रूप से हो रहा है जो अनुकरणीय है। यहाँ पर वार्षिक उत्सव श्रीरामविवाह (अगहन शुक्लपंचमी से पौष वदी दूज तक) और बसन्त पंचमी से होली तक का रंगोत्सव, चैत्र में श्रीरामनवमी (रामजन्मोत्सव) वैशाख शुक्ल नवमी श्रीकिशोरीजी की जयन्ती, ज्येष्ठ में फूल बँगला, अषाढ़ शुक्ल 2 को रथयात्रा, श्रावण शुक्ल तीज (झूलन झाँकी, मणि पर्वत) से पूर्णिमा तक मन्दिर में झूलनोत्सव आश्विन में दशहरे का दरबार एवं शरद् पूर्णिमा की झांकी उत्सव, कार्तिक में देवोत्थापिनी एकादशी, वृन्दा-विवाह, कार्तिक में दीपावली एवं अन्नकूट आदि यहाँ पूर्ण समारोह के साथ दर्शनीय ढंग से मनाये जाते हैं।

दूर्वादलद्युतितनुं तरुणाब्जनेत्रं,

हेमाम्बरं वर विभूषणम् भूषितांगम्।

कन्दर्पकोटि कमनीय किशोरमूर्तिम्,

पूर्ति मनोरथभुवं भज जानकीशम्।

भगवान् श्रीकृष्ण रुक्मिणी सहित जरासन्ध वध के उपरान्त अयोध्या पधारे थे। उन्होंने यहाँ कुछ काल विश्राम कर कनक-भवन का पुनर्निर्माण कराया और श्रीसीतारामजी की युगल दिव्य मूर्ति सेवा हेतु प्रदान की जो कि वर्तमान मन्दिर में बड़े सरकार के नाम से कहे जाते हैं और सिंहासन पर खड़े रूप में दर्शन दे रहे हैं। महाराज विक्रमादित्यजी ने अयोध्या के सांस्कृतिक स्थानों का पुनरुद्धार करते हुए कनक भवन को अतीव मनोरम एवं सुदृढ़ रूप में निर्माण कराया था जो कि यवन शासनकाल तक वर्तमान था। काल पाकर भगवत्प्रेरणा से प्रेरित हो महारानी वृषभानु कुंवरि (टीकमगढ़ स्टेट) अयोध्या दर्शनार्थ पधारीं। श्रीकनक भवन बिहारी की रूपमाधुरी ने इन्हें आकृष्ट किया, जिससे उन्होंने ठाकुरजी को अपना सर्वस्व भेंटकर प्राचीन जीर्ण-शीर्ण मन्दिर की दैन्यदशा को दूर किया और राज-भवन के रूप में कनक भवन का नव-निर्माण किया।

महाराजा श्रीमधुकर शाहजी जो कि मथुरा में विश्राम घाट पर सुवर्ण तुलादान किये थे और अपनी स्मृति में वहाँ राधाकृष्ण की सेवार्थ मन्दिर निर्माण कराये थे जिनकी धर्मपत्नी श्रीगणेश कुंवरिजी ने अयोध्या आकर सरयू से भगवान् श्रीराम को उपलब्ध किया और समादर पूर्वक वहाँ से ओरछा राज-भवन में लिवा गयीं। रामराजा के नाम से वहाँ की सम्पत्ति महारानी ने ठाकुरजी की सेवामें लगा दिया। महाराज मधुकर शाह एवं महारानी साहिबा टीकमगढ में राजधानी कायम किये जो अब तक क्रमानुगत संचालित है। उसी वंश में श्रीवृषभानु कुंवरि का प्रादुर्भाव हुआ और उन्होंने कनक भवन के नव-निर्माण का संकल्प पूर्ण किया। स्मरण रहे कि भक्तमालकार श्रीनाभाजी ने अपने ग्रन्थ में श्रीमधुकर शाह एवं गणेश कुंवरि का उल्लेख किया है।

स्वर्गद्वार

श्रीशंकर उवाच-

प्रथमं तत्र तीर्थं तु कथयामि वरानने।
स्वर्गद्वारं समुत्पन्नं प्रथमं सरयू तटे।।
मुक्तिद्वारमिदं ज्ञेयं स्वर्ग प्राप्तिकरं नृणाम्।
सहस्रधारामारभ्य पूर्वतः सरयू जले।।

षट्त्रिंशदधिकं प्रोक्तं धनुषां षट् शतानि च।
स्वर्गद्वारस्य विस्तारः पुराणज्ञैः प्रकीर्तिताः।।

श्रीशंकर जी पार्वतीजी से बोले कि अयोध्यापुरी में सर्वप्रथम स्वर्गद्वार नाम का तीर्थ प्रगट हुआ। इसीको विज्ञजन मुक्तिद्वार भी कहते हैं। सहस्रधारा (लक्ष्मण घाट) से पूर्व दिशा में छः सौ छत्तीस धनुष लम्बाई में इस तीर्थ का विस्तार पुराणज्ञों ने कहा है। इसकी फलश्रुति इस प्रकार है-

यद्यत्कामयते तत्र तत्तदाप्नोति मानवः।
स्वर्गद्वारे परासिद्धिः स्वर्गद्वारे परागतिः।।
जप्तं दत्तं हुतं पूर्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
ध्यानमध्यनं दानं सर्वं भवति चाक्षयम्।।

स्वर्गद्वार तीर्थ में स्वल्प भी किया गया सुकृत अक्षयफलदायक होता है। यहाँ जो-जो कामनायें की जाती हैं वह सब पूर्ण होती हैं। उपरान्त पार्वतीजी ने शंकरजी से स्वर्गद्वार में उनके रहने का प्रश्न उपस्थित किया भगवान्! आप कृपा कर मुझे यह सुनावें कि आपका निवास यहाँ कबसे और कैसे हुआ।

श्रीनागेश्वरनाथ

भूत-भावन शिवजी ने कहा कि - एक समय जब श्रीरामचन्द्र जी अपने दिव्य परिकर एवं प्रजा वर्ग सहित दिव्य साकेत धाम पधार चुके थे। तब अयोध्या देवी स्वयं रूप धारण कर रात्रि के समय कुशावती नगरी में महाराज कुश के समक्ष रात्रि में महल में जाकर उपस्थित हुई और बोली कि राजन्! तुम्हारे पिता ने हमारे पुरवासियों को अपने साथ साकेत धाम ले जाकर मुझे उजाड़ दिया। अब मेरी नगरी क्रमशः छिन्न-भिन्न होकर आपत्ति ग्रस्त हो पड़ी है। महाराज कुश ने उत्तर दिया कि माता यह मेरे पिता का दोष नहीं बल्कि आपमें निवास करने वाले प्राणियों की ऊर्ध्वगति आपकी महिमा द्वारा हुई।

तब अयोध्या देवी कुश महाराज से बोलीं-'यदि मेरा ऐसा माहात्म्य आप समझते हैं तो वहाँ चलकर निवास कर अपने पिता की राजधानी को सुसज्जित करके मुझे भी आनंदित करें' इतना कहकर अयोध्या देवी अन्तर्धान हो गई। सुप्रभात होने पर महाराज कुश ने यह वृतान्त अपने

मंत्रियों एवं राज पुरोहितों को सुनाया, पश्चात् मंत्रियों की सम्मति लेकर सहृद बन्धुओं सहित महाराज कुश श्रीअयोध्या पधारे एवं यहाँ आकर क्रमशः समस्त नगरी को सुसज्जित किया और पूर्व परिपाटी अनुसार राज्य कार्य सम्पादन किया। एकदिन सरयू स्नान के लिए गये हुए वह बन्धु-बान्धवों सहित सरयू में जल क्रीड़ा करते हुए नागराज कुमुद की भगिनी द्वारा देखे गये। उनके सौन्दर्य से मोहित हो नागकन्या ने उनके कर-कमलों के रत्नमय दिव्य कंकण को छिपकर उतार लिया। क्रीड़ासक्त होने के कारण कुशराज को यह बात ज्ञात न हो सकी। जल से बाहर निकलकर अपने कर में रत्नमय दिव्य कंकण को न देख कुपित हो कुशराज ने अग्निबाण संधान किया। भयभीता सरयू देवी ने प्रकट होकर कंकण हरण करने वाली नागकन्या का परिचय दिया। बाद में गरुड़ास्त्र संधान करने पर संत्रस्त हो, कुमुद नाग-भगिनी सहित आकर उपस्थित हुए। साथ ही भक्त नागराज की रक्षा कामना से मैं भी तत्काल वहाँ उपस्थित हुआ। मुझे देखकर कुशराज ने मेरा चरण-स्पर्श कर स्तवन किया, मैने उन पर प्रसन्न होकर उस नागकन्या को पत्नीरूप में स्वीकार करने को कहा तथा 'इच्छित वर माँग लो' ऐसा कहा। इस पर कुशराज ने प्रसन्न होकर उस नागकन्या का पाणिग्रहण किया और मुझसे निरन्तर यहाँ निवास कर सब लोगों की मनोकामना पूर्ति करते रहने के लिए प्रार्थना की। तबसे मेरा निवास स्थान स्वर्गद्वार में 'नागेश्वरनाथ' नाम से प्रसिद्ध हुआ। स्वर्गद्वार में स्नान करने वाले प्राणी नागेश्वरनाथ का दर्शन पूजन करके पूर्ण मनोरथ होते हैं। अयोध्या तीर्थ दर्शन का पूरा फल उन्हें ही मिलता है। मेरे इस प्रकार कुशराज को वर प्रदान करने के पश्चात् नागराज विधि पूर्वक मेरा पूजन करके अपनी पुत्री को लेकर चले गये। महाराज कुश 'नमःशिवाय' पंचाक्षर मंत्र द्वारा मेरी आराधना करते हुए यथास्थान सब तीर्थों को प्रमाणानुसार पुनः प्रतिष्ठित किये।

श्रीनागेश्वरनाथ की वार्षिक उत्सव यात्रा फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी (शिवरात्रि) को पूर्ण समारोह के साथ होती है।

तीर्थ विधि- स्वर्गद्वार में सरयू तट पर यात्री आकर प्रथम मुण्डन

स्नान एवं व्रत करें। उत्तम कल्प द्वादश रात्रि, मध्यम कल्प त्रिरात्रि निम्न कल्प एक रात्रि, उपवास युक्त जागरण ईश्वर स्मरण, नाम संकीर्तन आदि द्वारा व्यतीत करना कर्तव्य है। प्रातः यथाशक्ति दान तथा ब्राह्मणों को भोजन भी कराना चाहिए।

स्वर्गद्वार पर प्रतिदिन प्रातः स्नान करना उचित है। विशेषकर प्रति एकादशी को यहाँ सरयू स्नान अवश्य करना चाहिए तथा महाराज दशरथ कृत पूर्व कथित सरयू अष्टक का पाठ करना चाहिए। यहाँ के माहात्म्य के अनुसार तर्पण, श्राद्ध पितृ पूजन, गो सुवर्ण, अन्नादि दान विधि पूर्वक सुयोग्य सुपात्र ब्राह्मण को देना चाहिए। यहाँ पर स्नान के पूर्व सावधानी के लिए यात्रार्थियों के कुछ आवश्यक नियम बताये जाते हैं। जो कि प्रत्येक तीर्थ स्थानों पर जाते समय ध्यान में रखने योग्य हैं जैसे शौच मल-मूत्र त्याग, दातुन आदि कर्तव्य, प्रस्तुत तीर्थ से कुछ पहले ही दूर स्थल पर कर लेवें, जिससे कि अपने द्वारा वह तीर्थ किसी प्रकार अशुचि न होने पावे। तीर्थ को पूर्ण पवित्र भाव से उपयोग करने पर ही यथार्थ सुखास्वादन प्राणी को संभव है। शास्त्र विधि में कहे गये तीर्थों का फल शास्त्रों में कही गई मर्यादा पालन करने पर ही प्राप्त होता है। नवीन बापी, कूप निर्माण कराने की अपेक्षा प्राचीन तीर्थ जलाशयों का जीर्णोद्वार कराने में करोड़ों गुना अधिक फल प्राप्त होता है।

रुद्राष्टक

नमामीशमीशान निर्वाण रूपम्।
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेद स्वरूपम्।।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं।
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।।
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं।
गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम्।।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसार पारं नतोऽहम्।।
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं।
मनोभूतकोटि प्रभा श्रीशरीरम्।।

स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारू गंगा।
लसद्भाल बालेन्दुं कण्ठे भुजंगा।।
चलत्कुण्डलं भ्रूसुनेत्रं विशालं।
प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालं।।
मृगाधीश चर्माम्बरं मुण्डमालं।
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि।।
प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं।
अखण्डं अजं भानुकोटि प्रकाशं।।
त्रयःशूल निर्मूलनं शूलपार्णि।
भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं।।
कलातीत कल्याण कल्पांतकारी।
सदासज्जनानन्द दाता पुरारी।
चिदानन्द सन्दोह मोहापहारी।
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।।
न यावद् उमानाथ पादारविन्दं।
भजन्तीहलोके परे वा नारायणाम्।।
न तावत्सुखं शान्ति संतापनाशं।
प्रसीद प्रभो संर्वभूताधिवासम्।।
न जानामि योगं जपं नैव पूजां।
नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम्।।
जराजन्म दुःखौघतातप्यमानं।
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।।
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति।।

श्रीचन्द्रहरि

स्वर्गद्वारे नरः स्नात्वा दृष्ट्वा चन्द्रहरिं विभुम्।
वपनं तत्र कुर्वीत व्रती तत्र विचक्षणः।।
अयोध्या निलयं विष्णुं ज्ञात्वा शीतांशुरुत्सुकः।

आगत्य तीर्थ माहात्म्यं साक्षात्कर्तुं सुधानिधिः।।

क्रमेण विधि पूर्वं हि नानाश्चर्य समन्वितः।

आगत्य चात्र चन्द्रोऽथतीर्थ यात्रां चकार सः।।

श्री शंकर जी पार्वती जी से बोले- हे देवि! स्वर्गद्वार में स्नान करने वाला प्राणी चन्द्रहरिजी का दर्शन पूजन अवश्य करें। इनकी वार्षिकी यात्रा ज्येष्ठ की पूर्णिमा सरयू जन्मोत्सव के समय करना कर्तव्य है। अयोध्या के वैभव तीर्थ गौरव के दर्शन हेतु शीतांशुचन्द्रदेव स्वरूप धारणकर यहाँ उपस्थित हुए एवं विधि पूर्वक शास्त्र कथित रीति से समस्त तीर्थों की यात्रा किये। वे अनेक आश्चर्यजनक अनुभव पाकर चकित हो पड़े, उनकी यात्रा से संतुष्ट होकर भगवान् हरि वहाँ प्रगट हुए। इससे उनकी चन्द्रहरि ऐसी संज्ञा हुई।

श्रीधर्महरि

तस्माच्चन्द्रहरेः स्थानादाग्नेयां दिशि संस्थितः।

देवोधर्म्महरिर्नाम कलिकल्मषनाशनः।।

पुरा समागतो धर्मस्तीर्थयात्रा चिकीर्षया।

आगत्य च चकारोच्चैर्यात्रां तत्रादरेण सः।।

अहो विष्णुरहो तीर्थमयोध्या या महापुरी।

इत्युक्त्वा तत्र वहुशोननर्त च मुदाकुलः।

धर्मो माहात्म्यमालोक्य त्वयोध्यायाः विशेषतः।।

शंकरजी पार्वती जी से बोले हे देवि! उस चन्द्रहरि के स्थान से आग्नेय दिशा में (सुरसण्ड मन्दिर के पीछे) दक्षिण में कलि-कल्मष को नाश करने वाले श्रीधर्महरिजी विराजते हैं। एक समय धर्मराज स्वयं अयोध्या दर्शन हेतु आकर यहाँ के आश्चर्यजनक महत्व का पूर्ण अनुभव पाकर हाथ उठाकर नृत्य करने लगे तथा 'विष्णुपुरी धन्य है' 'अयोध्या का माहात्म्य अतुल है' 'यहाँ पर मनुष्य क्या नहीं प्राप्त कर सकता है' उच्चस्वर से ऐसा उनके जयघोष करने पर भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर प्रगट हो गये। तब भगवान् को प्रणाम कर धर्मराज ने स्तुति की जो इस प्रकार है -

नमः क्षीराब्धिवासाय शेषपर्यशंकशायिने।

नमो लक्ष्म्यंक संस्पृष्ट दिव्य पादाय विष्णवे।।1।।

भक्तार्तिनिघ्नपादाय नमो योगप्रियाय ते।

शुभांगाय सुनेत्राय माधवाय नमो नमः।।2।।

नमोऽरविन्दपादाय पद्मनाभाय ते नमः।

नमः क्षीराब्धिकल्लोलस्पृष्टगात्राय शारंगिणे।।3।।

ॐनमो योगनिद्राय योगज्ञै र्भावितात्मने।

तार्क्ष्यासनाय देवाय गोविन्दाय नमो नमः।।4।।

सुकेशाय सुनासाय सुललाटाय चक्रिणे।

सुवस्त्राय सुवर्णाय श्रीधराय नमो नमः।।5।।

सुबाहवे नमस्तुभ्यं चारुजंगाय ते नमः।

सुमुखाय सुदिव्याय सुविद्याय गदाभृते।।6।।

केशवाय च शान्ताय वामनाय नमो नमः।

धर्मप्रियाय देवाय नमस्ते पीतवाससे।।7।।

स्तोत्रेणानेन यः स्तौति मानवो मामतन्द्रितः।

सर्वान्कामानवाप्नोति पूजितः श्रीयुतः सदा।।8।।

श्रीधर्मराजजी हाथ-जोड़कर विष्णु भगवान् को प्रणाम कर बोले-भगवन्! आप शेष की शय्या बनाकर क्षीरसमुद्र में शयन करने वाले हैं। भगवती लक्ष्मी से सुसेवित आपके पादपद्म हैं, आपको मेरा प्रणाम है। योगियों के परम आदरणीय, भक्त दुःख भंजन श्रीचरण, शुभ अंगों से सुशोभित, सुन्दर कमल-नेत्रों वाले आपको मेरा प्रणाम है। हे पद्नाभ! कमल सदृश कोमल दिव्य-चरणों वाले, क्षीरसमुद्र के कल्लोल सुस्पर्शित शीतल अंगो वाले, शारंग धनुषधारी, योगियों के द्वारा सेवा पाने वाले एवं योग निद्रा में ही निरत रहने वाले, ओंकार स्वरूप आपको मेरा सादर नमस्कार है। गरुड़ासनासीन समस्त इन्द्रियगणों के आनन्दवर्धक गोविन्ददेव आपको मेरा प्रणाम है। घुंघराले केशों से सुशोभित, सुन्दर ललाट एवं सुनासायुक्त, चक्र को धारण करने वाले, तेजोमय पीताम्बरधारी, श्रीधर आपको मेरा प्रणाम है। सुन्दर हाथों जंघाओं से शोभित सुन्दर मुख-कमल एवं दिव्याति-दिव्य विद्या-विनय आदि गुणों से सम्पन्न, गदाधारी केशव के लिए मेरा बारम्बार

प्रणाम है। धर्म ही अत्यन्त प्रिय है जिनको ऐसे देवाधिदेव भगवान् विष्णु को मेरा सतत् प्रणाम है।

इस प्रकार स्तुति सुनकर भगवान् विष्णु धर्मराज के प्रति प्रसन्न होकर बोले- 'मैं तुम्हारे स्तवन से परम प्रसन्न हूँ, वरदान माँगो।' तब धर्मराज ने कहा- 'भगवन्! यदि दास पर आपकी प्रसन्नता है तो मैं यहाँ पर आपकी स्थापना करना चाहता हूँ। हे जगद्गुरो! जगत्-कल्याण के लिए ही मेरे नाम से प्रसिद्ध होते हुए आप यहाँ सदा निवास कर अयोध्या के समागत प्राणियों की अभिलाषा पूर्ण करते रहें।

श्री हरि से स्वीकृति पाने पर आदर पूर्वक धर्मराज ने श्रीधर्महरि की स्थापना की। भगवान् धर्महरि ने स्तुति से प्रसन्न होकर मानवमात्र के लिए वर प्रदान किया कि प्रमाद रहित होकर उक्त स्रोत्र से मेरी स्तुति करने वाले भक्तजन अपनी कामनाओं की संपूर्ति पायेंगे और ऐश्वर्य सम्पन्न होकर जगत् में पूजित होंगे।

सरयू सलिले स्नात्वा शुचिस्तद्गत मानसः।
देवं धर्महरिं पश्येत्सर्वपापैः प्रमुच्यते।।
अत्र दानं तथा होमो जपो ब्राह्मण भोजनम्।
सर्वमक्षय्यतां याति विष्णुलोक निवासकृत्।।
प्रमादालस्यतो वापि राजदेव गृहार्तिभिः।
नित्य कर्म निवृतिः स्यादथ पुंसोऽवशात्मनः।।
तेनाथात्र विधातव्यं प्रायश्चितं विधानतः।
अत्र साक्षात् स्वयं देवो विष्णुर्वसति सादरः।।
आषाढ़े शुक्लपक्षस्य चैकादश्यां सुलोचने।
तस्य साम्वत्सरी यात्रा कर्त्तव्यातु विधानतः।।

शंकर पार्वतीजी से बोले- हे देवि! श्रीसरयू में स्नान कर पवित्र मन से इनका दर्शन-पूजन करे। यहाँ पर यथाशक्ति दान, हवन, मंत्र, जप एवं ब्राह्मणों को भोजन भी कराना कर्तव्य है। नित्य-नैमित्तिक कर्मों की अवहेलना से होने वाले पापों का प्रायश्चित भी यहाँ करना चाहिए। यहाँ पर भगवान् विष्णु का उदारता पूर्वक सदा निवास रहता है, अतः प्राणियों को

यत्न पूर्वक इनकी वार्षिकी यात्रा पूर्ण उत्सव के साथ आषाढ़ शुक्ल एकादशी को करनी चाहिए।

जनता की जानकारी के लिए यहाँ यह बता देना परम आवश्यक प्रतीत होता है कि यह स्थल इधर कुछ काल से 'चित्रगुप्त मंदिर' के नाम से प्रसिद्धि पा रहा है। वहाँ सामने शिलालेख में धर्महरि की यात्रा तिथि अंकित है। व्यवहारतः चित्रगुप्त जी की प्रतिष्ठा पूजा कराने के निमित्त कुछ भक्तों ने यहाँ दूसरी शिला भी चित्रगुप्त के नाम की गाड़ रखी है, जिस पर यम-द्वितीया को वार्षिक उत्सव बताया गया है। किन्तु ग्रन्थ के अनुसार इस तिथि पर यमस्थली (जमथरा) की यात्रा का प्रामाणिक उल्लेख है। अतः यहाँ पर श्रीहरि का पूजन चतुर्भुजी विष्णु-विग्रह में ही युक्ति संगत है। उसके अभाव में भावना द्वारा देवता की पूजा पूर्वोक्त स्तोत्र-पाठ के साथ करके स्थल को ही प्रणाम करके यात्रा सम्पन्न करनी चाहिए।

श्रीराम सभा

तस्माद्दक्षिणदिग्भागे स्वर्गद्वाराच्च पार्वति।
अयोध्यापीठमिति सा ख्याताभून्नगनन्दिनि।।
कोशमात्रं तु विस्तारश्चतुर्दिक्षु प्रमाणतः।
तन्मध्ये च सभा रम्या रामचन्द्रस्य शोभने।।

श्रीशंकर जी पार्वतीजी से कहने लगे- हे देवि! स्वर्गद्वार से दक्षिण दिशा में एक कोस के विस्तार में अयोध्यापीठ सुप्रसिद्ध है। उसके मध्य में श्रीरामचन्द्रजी का रमणीय सभा स्थल है। वह नानाविध रत्नों द्वारा आश्चर्ययुक्त रचनाओं से विरचित है। उसमें यम, कुवेर, इन्द्र, वरुण आदि देवताओं का दिव्य-मण्डप है। पर्वतराशि सदृश पाप भी इसके दर्शन मात्र से तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं। इस दिव्य-सभा में बैठकर देवताओं से वन्दनीय श्रीरामचन्द्र जी अपने शासनकाल में प्रजावर्ग को न्याय प्रदान करते थे। इसी सभा में ब्राह्मण और श्वान तथा उलूक और गीध का न्याय भी किया गया था। यहाँ पर भ्राताओं सहित श्रीराघवेन्द्र रामभद्रजी का पूजन करना चाहिए।

भौगोलिक परिवर्तन के परिणाम स्वरूप वर्तमान समय में धर्महरि मन्दिर (चित्रगुप्त) से दक्षिण भाग में अवस्थित तुलसी स्मारक भवन एवं

दन्तधावन कुण्ड जो दृष्टिपथ पर है, यह भूभाग श्रीरामकालीन राजसा की ही भूमि है जो विविध सुसज्जाओं से समलंकृत सभा भवन था। उसका एक अंश प्रमोद वन (प्रमदावन) जिसमें दिव्य संगीत-कला विशेषज्ञ गंधर्व एवं अप्सरायें श्रीरामदरबार को आमोदित करने के लिए निवास करती थीं। उक्त तथ्यको हृदयंगम कर गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस की रचना यहीं प्रारम्भ की थी।

वैदेहीसहितं सुरद्रुम तले हैमे महामण्डपे,
मध्ये पुष्पकमासने मणिमये बीरासने संस्थितम्।
अग्रे वाचयति प्रभंजन सुते तत्त्वं मुनिभ्यः परम्,
व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे श्यामलम्।।

नवमी भौमवार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकाशा।।
जेहि दिन रामजनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहां चलि आवहिं।

दन्तधावन कुण्ड

सभायाः दक्षिणे भागे तीर्थ चाति मनोहरम्।
नाम्ना लोके च विख्यातं दन्तधावन कुण्डकम्।।
यत्र स्नानेन दानेन गर्भवासक्षयो भवेत्।
नित्यदा रामचन्द्रस्तु तत्रागत्य वरानने।।
दन्तधावनकं भद्रे कुरुते भ्रातृभिः सह।।

सभागृह के दक्षिण में दन्तधावन कुण्ड है। भ्राताओं सहित श्रीरामजी स्वयं यहाँ पधारकर दातुन किया करते थे। पर एक समय कौडिल्य नामक ब्राह्मण आकर विश्राम पूर्वक स्नान कर रहे थे, जोर से वायु चलने के कारण उनका मृगचर्म कुण्ड में जा गिरा, जिससे उस मृग का तत्काल दिव्य विग्रह हो गया और वह दिव्य विमान पर चढ़कर अप्सराओं से सेवित हो परमधाम को चलने लगा, जाते समय श्रीरामजी के पूछने पर उसने अपना परिचय दिया कि - 'मैं पूर्वजन्म में एक वैश्य था। धन के मद से गर्वित हो शास्त्र की मर्यादाओं का उल्लंघन करके काल-यापन करता था, वेश्याओं में आसक्त चित्त मैने एकदिन अनजान में ही तुलसी में जल डाल दिया। मरने के बाद

उसी पुण्य के फलस्वरूप मृगयोनि मिलकर मेरा चर्म भजनशील महर्षि की सेवा में लगा, जिससे मुझे इस तीर्थ का स्पर्श प्राप्त हुआ। यहाँ के दिव्य प्रभाव से मेरे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो गये और यह उत्तम पद मिला, अब आपके प्रसाद से मैं समस्त दुःखों से रहित होकर शाश्वत पद को जाता हूँ।' ऐसा कहकर श्रीराम की परिक्रमा करते हुए वह दिव्य साकेत को चला गया।

इस तीर्थ की वार्षिक यात्रा श्रीरामनवमी है।

रामदुर्ग (रामकोट)

सभायाः पश्चिमें भागे राम दुर्गस्तु विद्यते।

उस सभा के पश्चिम ओर श्रीरामदुर्ग है, जिसे रामकोट कहा जाता है।

श्रीपार्वत्युवाच-

भगवन्रामचन्द्रस्य पुर्यां सर्वे समागताः।
वानराः राक्षसा श्चैव तेषां स्थानानिमेवद।।

श्रीपार्वतीजी ने श्रीशंकर जी से पूछा- कि हे देव! श्रीरामचन्द्रजी के साथ आये हुए सुग्रीवादि वानरों तथा विभीषणादि भक्तों के स्थानों का भी वर्णन कीजिये।

श्रीशंकर उवाच -

राजद्वारे हनूमान्वै वायुपुत्रस्तु तिष्ठति।
तथा तिष्ठति सुग्रीवो दक्षिणे च हनूमतः।।
सुग्रीवस्य समीपे तु ह्यंङदोपि विराजते।
दुर्गस्य दक्षिणे द्वारे नलनीलौ प्रतिष्ठितौ।।
सुषेणो वानर श्रेष्ठो नव रत्नस्य पूर्वतः।
नवरत्नादुत्तरे तु गवाक्षो नाम वानरः।।
दुर्गस्य पश्चिमे द्वारे दधिवक्त्रस्तु तिष्ठति।
दुर्गेश्वरेति नाम्नाहं तस्मिन्द्वारे व्यवस्थितः।।
ततः शतबलिर्वीरः तदग्रे गन्धमादनः।
ऋषभः शरभश्चैव पनसोऽपि विराजते।।
उत्तरे द्वारदेशे तु राजते च विभीषणः।
विभीषणस्य महिषी सरमा नाम राक्षसी।।
पूर्वे विभीषणस्यापि सदा तिष्ठति पूजिता।

रक्षणं धर्मशीलानां भक्षणं दुष्ट चेतसाम्।।
करोति सरमा नित्यं कोशलायां प्रहर्षिता।
ततो विघ्नेश्वरो देवः पूर्वभागे च तिष्ठति।।
यस्य दर्शनतो नृणां विघ्नलेशो न जायते।
तस्मात्पूर्व दिशो भागे वीरः पिंडारको वली।।
कोशलारक्षणे दक्षः दुष्ट ताडन तत्परः।
ततः पूर्व दिशो भागे वीरस्य शुभ शंसिनः।।
स्थानं मत्तगजेन्द्रस्य वर्तते नियतात्मनः।
तदग्रे सरसि स्नात्वा पूजां कुर्यात् विचक्षणः।।
नवरात्रिषु पञ्चम्यां यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।
गन्ध पुष्पादि धूपैश्च नैवेद्यैश्च विधानतः।।
पूजनीयः प्रयत्नेन सर्व कामार्थ सिद्धिदः।
मंगल्ये मंगल्ये यात्रा तस्यस्यात्प्रति मासिकी।।
ततः पूर्व दिशो भागे द्विविदोऽपि विराजते।
ईशानकोणके मैन्दो बुद्धिमानवतिष्ठति।।
ततो दक्षिण दिग्भागे जाम्बवांस्तु विराजते।
तस्माद् दक्षिणतो वीरः केशरी च विराजते।।
दुर्ग भित्तौ सदा ह्येते रक्षां कुर्वन्ति वानराः।।

श्रीशंकर जी पार्वतीजी से बोले कि हे देवि! राजद्वार में वायु पुत्र हनुमान पूर्व में प्रतिष्ठित हैं, उनसे कुछ दक्षिण अंगद सहित सुग्रीव विराजित हैं। दुर्ग से दक्षिण शिल्प विद्या के ज्ञाता नल, नील प्रतिष्ठित हैं और कुवेर टीला नवरत्न के पूर्व वानर श्रेष्ठ सुषेणजी शोभित हैं। नवरत्न के उत्तर भाग में गवाक्ष नाम के वानर स्थित हैं। दुर्ग के पश्चिम द्वार पर दधिवक्त्रजी रहते हैं। दुर्ग के पश्चिम द्वार पर ही दुर्गेश्वर नाम से मैं रहता हूँ। मेरे ही सामने 'शतबलि', 'गन्धमादन', 'ऋषभ', 'शरभ' एवं 'पनस' विराजते हैं। उत्तर द्वार पर 'विभीषणजी स्थित हैं। विभीषणजी की स्त्री 'सरमा' नाम की देवी पूर्व में सदा विद्यमान रहती हैं। ये धर्मशीलों की रक्षा एवं दुष्टों का दमन नित्य ही प्रसन्न मन से कौशलपुरी में करती हैं। उनके पूर्व भाग में 'विघ्नेश्वर

श्रीगणेश' विराजते हैं। इनका दर्शन करने से मनुष्यों को विघ्नों द्वारा कष्ट नहीं मिलता है। इनके पूर्व दिशा में 'पिण्डारक वीर' स्थित हैं जो इस पुरी की रक्षा और दुष्टों को प्रताडित करते हैं। इनके पूर्व दिशा में 'श्रीमत्तगजेन्द्र-विभीषण के पुत्र 'मातगैंड़' का स्थान है। सामने के सरोवर सप्तसागर अथवा सरयू में स्नान करके भक्तगणों को इनकी पूजा करनी चाहिए। नवरात्र में पञ्चमी तिथि को यहाँ की वार्षिकी यात्रा का विधान है। इस दिन गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि से विधि पूर्वक पूजन करने से भक्तों की सब कामनायें पूर्ण होती हैं। प्रतिमास मंगल के दिन यहाँ का दर्शन, प्रशस्त है। इसके पूर्व दिशा में 'द्विविदजी' विराजते हैं। उनके ईशान कोण में 'मयन्द' तथा उनके दक्षिण में 'जाम्बवानजी' हैं। इन्हीं के दक्षिण में महाराज 'केशरीजी' भी विराजते हैं। ये सब बानराधिपति दुर्ग के संरक्षक हैं।

इन दुर्ग रक्षकों के नाम के शिलालेख वर्णित स्थानों में आज भी विद्यमान हैं। केशरी-किशोर नाम से यहाँ हनुमानजी इधर स्थापित हुए हैं जो कि केशरीजी के निजी स्थान का द्योतक है। माधुरी कुञ्ज अध्यक्ष के द्वारा इसका पुनर्निर्माण सम्भव हुआ है।

श्रीरत्नमण्डप

अयोध्या नगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यगे।
ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं शुभम्।।
महामरकतप्रख्यं नाना रत्नैश्च मण्डितम्।
सिंहासनं चित्तहरं कांत्या तामिश्रनाशनम्।।
तस्योपरि समासीनं रघुराजं मनोहरम्।
ध्यायेत्कमल पत्राक्षं जानकी सहितं हरिम्।।

ध्यानम्

नीलाम्भोधर कान्तिकान्तमनिशम् वीरासनाध्यासिनम्।
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरम् हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकराम् विद्युन्निभां राघवम्।
पश्यन्तं मुकुटांगदादि विविधैः कल्पोज्ज्वलांगं भजे।।

भगवान् श्रीशंकर जी पार्वती से बोले- हे देवि! उक्त महावीरजी के दर्शन पूजन के उपरान्त दुर्ग में प्रवेश करते हुए परम रमणीय दिव्य रत्नमय

मण्डप के मध्य में सुन्दर कल्पवृक्ष की सुशीतल छाया में रत्न जटित सिंहासन पर आरुढ़ श्रीजानकी जी सहित नानाविध रत्नों के अलंकारों से सर्वांग अलंकृत मरकतमणि सदृश सुन्दर-श्याम वर्ण कमल सदृश नेत्रों वाले प्रभु राघवेन्द्र को मध्य में ध्यान करते हुए सादर श्रद्धापूर्वक पूजन करना चाहिए। इनके पूजन में विशेषतया मन्त्रराज षड्क्षर को प्रारम्भ से अन्त तक प्रयोग में लाना चाहिए। पूजनोपरान्त हाथ-जोड़कर इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए-

राघवेन्द्र महाराज रावणान्तक भोऽच्युत।
कामादिभिः पराभूतं रक्ष मां शरणागतम्।।
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः।।
सम्प्राप्य नगरीं दिव्यामभिषिक्ताय सीतया।
राजेश्वराधिराजाय सीतायाः पतये नमः।।

इस प्रकार स्तुति कर दण्डवत् प्रणाम करना चाहिए यह स्थल नित्य दर्शन योग्य है। महाराजा वीर श्रीविक्रमादित्य जी ने इस स्थल को अपने वैभव के अनुरूप जीर्णोद्धारा कराकर श्रीसीतारामजी की प्रतिष्ठा की थी जो वर्तमान मन्दिर में अद्यावधि दर्शन दे रहे हैं। महाराजा रींवा नरेश श्रीरघुराज सिंह देव जू ने अयोध्या पधारकर उक्त मन्दिर का पुनरुद्धार कराया और उसकी सुचारु रूप से सेवा-पूजा के लिए कई ग्राम दिये थे। यह स्थल वस्तुतः लंका विजय के उपरान्त श्रीराम के राज्याभिषिक्त होने का पुण्य-स्मृति स्थल है। इसी से इसे वर्तमान समय मे राजगद्दी कहा जाता है।

श्रीराघवं दशरथात्मजमप्रमेयं,
सीतापतिं रघुकुलान्वय रत्नदीपम्।
आजानु बाहुमरविन्द दलायताक्षं,
रामं निशाचर विनाशकरं नमामि।

श्रीलोमश मुनि का आश्रम

सम्प्रति यह आश्रम श्रीरामगुलेला स्थान के नाम से सुप्रसिद्ध है, जो श्रीराम-जन्मभूमि से पूर्व दिशा मे आमावाराज मन्दिर के सन्निकट है। यहाँ श्रीलोमशमुनि की प्राचीन प्रतिमा भी दर्शनीय है।

सीता रसोई

शंकर उवाच -

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि कथां पातक नाशिनीम्।
सीतायाः पाक सदनं सदा पूर्ण विराजते।।
तस्य दर्शन मात्रेण करस्थाः सर्व सिद्धयः।
तस्मात्सर्वार्थदा देवि यात्रा स्यात्सार्वकालिकी।।

श्रीशंकरजी ने कहा- हे देवि! इस जन्मभूमि के निकट श्रीसीताजी का पाक स्थान (सीता रसोई) है जिसके दर्शन से आजन्मकृत पापों से भी मानव छूट जाता है। अतएव इस स्थान की यात्रा नित्य करने योग्य है।

सीता-कूप

जन्मस्थानात्तु भो देवि चाग्निकोणे विराजते।
सीता कूप इति ख्यातो ज्ञान कूप इति श्रुतः।।
जलपानं कृतं येन तस्य कूपस्य पार्वति।
स ज्ञानवान् भवेल्लोके विवुधानां गुरुर्यथा।।

हे देवि! उस जन्मस्थान से अग्निकोण में अति निकट ही सीता-कूप नाम का तीर्थ विख्यात है। इसका जल-पान करने से प्राणी विशुद्ध ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इसी कारण इसका नाम ज्ञान-कूप भी है। यहाँ के जल की यह विशेषता है कि कैसा भी असाध्य रोगी इस जल का सेवन करे तो वह पूर्ण स्वस्थता को प्राप्त करता है। उसके भीतर आध्यात्मिक शक्ति की अभिवृद्धि होती है। आज भी यह अनुभवसिद्ध है।

अयोध्या के ऐतिहासिक प्रसिद्ध घाट

जैसा कि सर्वविदित है कि भगवान् राम की परम-पावन पूरी अयोध्या श्रीसरयू की गोद में अवस्थित है। अयोध्या के पश्चिम, उत्तर एवं पूर्व दिशाओं में सतत् सरयू प्रवाहित होती रहती हैं। श्रीअवध के इन तीनों दिशाओं में अनेक घाट हैं जिनमें से कुछ ऐतिहासिक एवं प्रसिद्ध घाटों का वर्णन यहाँ किया जा रहा है। पश्चिम से प्रारम्भ होकर सरयू की धारा के प्रवाहनुरूप पूर्व दिशा के अन्तिम प्रसिद्ध घाट तक क्रमानुसार विवरण इस प्रकार है -

श्रीगोप्रतार (गुप्तार) घाट

तीर्थ तदुत्तरे श्रेष्ठं गोप्रताराभिधं महत्।
विष्णु स्थानं च तत्रैव नाम्ना गुप्तहरिः स्मृतः।।

निर्मली कुण्ड से थोड़ी दूर उत्तर दिशा में परम-पावन तीर्थ रूप गोप्रतार घाट है जिसे बाद में लोकभाषा में गुप्तार घाट के नाम से प्रसिद्धि मिली। यहीं देवताओं द्वारा प्रार्थना करने पर देवताओं के बल-वर्द्धनार्थ स्वयं भगवान् विष्णु आकर गुप्त रूप से तप किये थे। इसी कारण उसी समय से वहाँ 'श्रीगुप्तहरिजी' की पूजा प्रसिद्ध हुई। समस्त देवताओं के सहित शंकरजी ने भगवान् विष्णु की स्तुति की थी। इसका पाठ प्रत्येक दर्शनार्थी को यहाँ आने पर अवश्य करना चाहिए। वह इस प्रकार है।

नमस्तस्मै यमीक्षन्ते, योगिनो गत मृत्यवः।
परमं पुरुषं पारे तमसां महतां तथा।।
यज्ञाय यज्ञ हविषे ऋग्युजुः साममूर्तये।
नमः सरस्वतीवास हंसायाक्षररूपिणे।।
सत्याय धर्मनिधये श्रेत्रज्ञायामृतात्मने।
सांख्ययोग प्रतिष्ठाय नमो मोक्षैक हेतवे।।
घोराय मायानिधये सहस्र शिरसे नमः।
योगनिद्रात्मने नाभिपद्मोद्भूत जगत्सृजे।।
नमः सलिलरूपाय कारणाय महात्मने।
कार्यध्नाथाय बलिने जीवाय परमात्मने।।
गोप्त्रे प्राणाय भूतानां नमो विश्वाय वेधसे।
दृप्ताय सिंह वपुषे दैत्यसंहार कारिणे।।
वीर्यायानन्तमनसे जगद्भावभृते नमः।
संसारहन्त्रे मोहाय ज्ञानाय तिमिरच्छिदे।।
अचिन्त्यधाम्ने गुप्ताय रुद्राय च द्विजाय च।
शान्ताय सुख कल्लोल कैवल्य पददायिने।।
सर्वभावातिरिक्ताय नमः सर्वात्मने तथा।
इन्दीवरदलश्यामं स्फुरत्किञ्जल्क विभ्रमे।।

विभ्राणं वाससी विष्णुं नौमिनेत्ररसायनम्।।

श्रीशंकर जी बोले-मृत्यु से परे अविनाशी जिन परमपुरुष का कालजयी योगीगण दर्शन करते हैं, तम से परे उस महाविभूति के लिए मेरा नमस्कार है। यज्ञ के साधन एवं यज्ञ और हवि, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद इन सब नामों से आप ही सम्बोधित होते हैं। अक्षर-स्वरूप, हंस, सरस्वती निवास, आपके लिए नमस्कार है। सत्य स्वरूप, धर्म-निधि, अमृतात्मा, क्षेत्रज्ञ सांख्य योग की प्रतिष्ठा करने वाले, मोक्ष के देने वाले, आपको नमस्कार है। काल-स्वरूप, सम्पूर्ण माया के निधि स्थान, सहस्रों शिर वाले योग निद्रा में निरत रहने वाले, अपने नाभिकमल द्वारा जगत् का सृजन करने वाले आपके लिए नमस्कार है। जल-स्वरूप, करण-स्वरूप, जगत् के सृष्टा एवं प्रलयकारी, परम बलवान, जीवात्मा-स्वरूप, परमात्मा के लिए मेरा नमस्कार है। सम्पूर्ण भूतों के प्राणों के रक्षक, विश्व-स्वरूप उस ब्रह्म के लिए मेरा नमस्कार है। हिरण्यकश्यप के दर्प-दलन करने के लिए नृसिंह रूप धारण करने वाले एवं सम्पूर्ण दैत्यों का संहार करने वाले, अनन्त पराक्रम शाली, मन स्वरूप, सम्पूर्ण जगत का भरण-पोषण तथा संहार करने वाले मोह स्वरूप, अज्ञान स्वरूप अन्धकार को दूर करने वाले आपके लिए नमस्कार है। जिसके धाम का बुद्धि द्वारा निर्णय नहीं हो पाता, परम गुप्त रुद्र-स्वरूप और ब्राह्मण स्वरूप, शान्त स्वरूप, आनन्द समुद्र रूप, कैवल्य पद को देने वाले, सम्पूर्ण भावों से परे सर्वात्म स्वरूप आपके लिए नमस्कार है। इन्द्र नीलमणि सदृश-श्यामांग, सुन्दरकान्ति वाले, पीताम्बरधारी, नयनानन्दवर्द्धक, भगवान् विष्णु के लिए मेरा बार-बार नमस्कार है।

इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् की पूर्ण प्रसन्नता मिलती है। गुप्त रूप से रहने के कारण गुप्तहरि नाम पड़ा तथा तपस्या के समय चक्र-सुदर्शन को भगवान् ने अलग स्थापित किया इसीसे चक्रहरि नाम प्रसिद्ध है। इस गुप्तार तीर्थ में साकेत गमन समय श्रीअयोध्या से समस्त प्राणियों को साथ मे लेकर लीला सम्बरणार्थ श्रीरामचन्द्र जी पैदल आये थे और श्रीचरणों से सरयू को स्पर्श करके दिव्य परमधाम को पधारे थे। इसलिए यह तीर्थ सर्वश्रेष्ठ है। यहाँ कार्तिक मास भर स्नान एवं कल्पवास

महत्वपूर्ण बताया गया है।

यहाँ पर स्नान करके जितेन्द्रिय होकर गौ, अन्न, वस्त्रादि दान करने से पुनरावृत्ति रहित अक्षयधाम की प्राप्ति होती है। सम्पूर्ण विश्व में इस तीर्थ की तुलना के योग्य अन्य कोई तीर्थ नहीं है यहीं पर समस्त तीर्थों के राजा प्रयाग भी अपनी पाप राशि धोने के लिए प्रतिवर्ष कार्तिक मास में प्रातः स्नानार्थ आते हैं। प्राचीन समय में जबकि गोधन की प्रतिष्ठा सर्वाधिक थी, उस पार (गोण्डा) से गौओं के आने के लिए यहाँ सेतु निर्मित कराया गया था। इस कारण इसका महत्व और अधिक हो जाता है। (अतः विशेष यत्न के साथ प्रत्येक दर्शनार्थी को यहाँ स्नान एवं श्रीगुप्तहरि तथा श्रीचक्रहरिजी का दर्शन-पूजन अवश्य करना चाहिए।)

चक्रतीर्थ, विष्णुहरि

गुप्तार घाट के आगे अर्थात् पूर्व दिशा में वर्तमान अवध में धनयक्ष कुण्ड के पास चक्रतीर्थ घाट है। इस ऐतिहासिक घाट की प्रसिद्धि घाट की अपेक्षा तीर्थ के रूप में अधिक है।

इत्युक्त्वा देव देवेश चक्रेणोत्खाय भूतले।
जलं प्रकटयामास गांगम् पातालतः क्षणात्।।
चक्रतीर्थमिति ख्यातं ततः प्रभृति पार्वति।
त्वन्नामपूर्विका विप्र मन्मूर्तिरिह तिष्ठतु।।
विष्णुहरिरिति ख्याता भक्तानां मुक्तिदायिनी।
कार्तिके शुक्लपक्षस्य प्रारभ्य दशमी तिथिम्।।
पूर्णिमामवधिं कृत्वा यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।

शंकर जी ने पार्वती से कहा- हे देवि! उस धनयक्ष कुण्ड के निकट पश्चिम भाग में चक्रतीर्थ नाम का पवित्र विष्णु क्षेत्र है। एक समय वेद-वेदांग पारंगत स्वधर्मानुष्ठान में निरत विष्णु शर्मा नामक ब्राह्मण ने तीर्थ-यात्रा के निमित्त अयोध्या आकर उक्त स्थल पर निवास किया। वे भगवान् विष्णु का साक्षात्कार करने के लिए अत्यन्त कष्ट सहन करते हुए घोर तप करने लगे। तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् प्रकट हुए, विष्णु शर्मा ने दर्शन कर स्तुति एवं प्रणाम किया। भगवान् ने अपने चक्र-सुदर्शन द्वारा खोदकर तीर्थ निर्माण किया उसमें तत्क्षण पाताल गंगा का जल परिपूर्ण हो गया, तभी से वह

चक्रतीर्थ नाम से प्रसिद्ध हुआ। भगवान् विष्णु ने कहा- ब्रह्मन्! पहले अपना फिर मेरा नाम रखकर (विष्णुहरि नाम की) मेरी मूर्ति यहाँ स्थापित करो जिसका दर्शन करके भक्तजन भक्ति-मुक्ति प्राप्त करेंगे। कार्तिक शुक्ल पक्ष दशमी से पूर्णिमा तक यहाँ की साम्वत्सरी यात्रा होगी। चक्रतीर्थ में स्नान, दानादि करके श्री विष्णुहरि का दर्शन-पूजन-स्तवन करने वाले अनन्त फलभागी होंगे, ऐसा वर देकर भगवान् अन्तर्धान हो गये। उनके कथनानुसार विष्णु शर्मा ने वहाँ श्रीविष्णुहरि की स्थापना कर भक्ति पूर्वक स्तुति की।

यथा- प्रसीद भगवन् विष्णो प्रसीद पुरुषोत्तम।
प्रसीद देव देवेश प्रसीद कमलेक्षण।।
जय कृष्ण जयाचिन्त्य जय विष्णोजयाव्यय।
जय यज्ञपते नाथ जय विश्वपते विभो।।
जय पाप हरानन्त जय जन्म दुरापह।
नमः कमलनाभाय नमः कमल मालिने।।
नमः सर्वेश भूतेश नमः कैटभ मर्दिने।
नमस्त्रैलोक्यनाथाय चतुर्मूर्ते जगत्पते।।
नमो देवाधिदेवाय नमो नारायणाय च।
नमः कृष्णाय रामाय नमश्चक्रायुधाय च।।
त्वं माता सर्वलोकानां त्वमेव जगतः पिता।
भयार्तानां सुहृन्मित्रं प्रियस्त्वं च पितामहः।।
त्वं हविस्त्वं वषट्कारस्त्वं प्रभुस्त्वं हुताशनः।
करणं कारणं कर्त्ता त्वमेव परमेश्वरः।।
शंखचक्रगदापाणे मां समुद्धर माधव।
प्रसीद मन्दर धर प्रसीद मधुसूदन।।
प्रसीद कमलाकान्त प्रसीद भुवनाधिप।

हे भगवन्! हे विष्णो! हे पुरुषोत्तम! देव देवेश! हे कमल नेत्र! मुझ पर प्रसन्न होइये। हे कृष्ण! हे अचिन्त्य! हे विष्णो! हे अव्यय! हे यज्ञपते! हे विश्व के पति! हे सर्व समर्थ! आपकी जय हो। आप समस्त पापों को हरने

वाले हैं, जन्म-मृत्यु रूप चक्र से बचाने वाले प्रभो आपकी जय हो। जिनकी नाभि से कमल उत्पन्न है एवं जिन्होंने कमल-माला धारण कर रक्खी है ऐसे प्रभु के लिए नमस्कार है। समस्त प्राणियों के ईश्वर मधुकैटभादि राक्षसों को मारने वाले, तीनों लोकों के नाथ आपको नमस्कार है। देवताओं के स्वामी, चक्र-सुदर्शनधारी नारायण को नमस्कार है। श्रीरामचन्द्र तथा श्रीकृष्ण के लिए प्रणाम है समस्त लोकों के आपही माता-पिता हैं तथा भयभीतजनों के आप प्यारे मित्र हैं। आपही हवि हैं आपकी वषट्कार हैं, आपही अग्नि हैं और आपही यज्ञ के पति हैं। समस्त विश्व के करण-कारण तथा कर्त्ता परमेश्वर भी आपही हैं। हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करने वाले माधव! संसार समुद्र से मेरा उद्धार कीजिये एवं मन्दराचल धारण करने वाले मधुसूदन प्रसन्न होइये। चौदह भुवनों के स्वामी लक्ष्मीपति आप कृपाकर मुझ दास पर प्रसन्न होइये, मैं बार-बार आपको प्रणाम करता हूँ।

इस प्रकार हाथ-जोड़कर श्रीविष्णुहरिजी को साष्टांग दण्डवत् करना चाहिए। सम्प्रति इस स्थल पर शिलालेख मात्र अवशेष है। मुहल्ले का नाम चक्रतीरथ प्रचलित है।

सुमित्रा भवन व घाट

तस्माद्दक्षिण दिग्भागे वर्तते परमं महत्।
सुमित्रा भवनं रम्यं धनुः त्रिंशच्च भामिनि।।
यत्र जातौ महात्मानौ तथा शत्रुघ्नलक्ष्मणौ।
तद् भवनात् पश्चिमे तु सुमित्राकुण्डमुत्तमम्।।

श्रीराम-जन्मभूमि से तीस धनुष दक्षिण दिशा में श्रीसुमित्रा भवन प्रतिष्ठित है। यहीं पर श्रीलक्ष्मणजी तथा श्रीशत्रुघ्नजी का जन्म हुआ था। इसीके पश्चिम में थोड़ी दूरी पर श्रीसुमित्रा घाट है जिसे कुण्ड नाम से अभिहित किया गया है। यहाँ स्नान तथा दर्शन से प्राणियों के समस्त पाप नष्ट होते हैं और अनेक आधि-व्याधियाँ मिट जाती हैं।

श्रीकौशल्या घाट

जन्मस्थानात् पश्चिमे तु श्रीवाशिष्ठ्यास्तटे शुभे।
मणिमण्डित सोपानं कौशल्या तीर्थमुत्तमम्।।

श्रीराम-जन्मभूमि से पश्चिम सरयू जट में सुन्दर मणि-मण्डित

सीढ़ियों से सुसजिजत परम उत्तम श्रीकौशल्याजी का दिव्य तीर्थ (घाट) है। श्रीकौशल्याजी का भवन तो 'श्रीराम-जन्मभूमि' ही है।

कैकेयी भवन एवं कैकेयी घाट

जन्म स्थानुदुत्तरेतु वर्त्तते भवनं श्रृणु।
चतुर्विंशत्प्रमाणं च स्थानं वै लोकपावनम्।।
कैकेय्याः भवनं दिव्यं यत्र जातो रघूद्वहः।
भरतो नाम धर्मात्मा गुरुदेवार्चने रतः।।
तत्पश्चिमे तु कैकेय्यास्तीर्थ चाति मनोहरम्।

जन्म स्थान के उत्तर दिशा में चौबीस धनुष पर कैकेयीजी का भवन वर्णित है जिसमें श्रीरघुवंशभूषण परम धर्मात्मा श्रीभरतजी का जन्म हुआ था। उसके पश्चिम में सुमनोहर कैकेयी तीर्थ (घाट) है।

राजघाट

महाराज श्रीदशरथजी के सरयू स्नान का घाट राजघाट के नाम से प्रसिद्ध हुआ। संस्कृत साहित्य में अनुपलब्ध तत्वों की पूर्ति रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा की गई है। मानस में राजघाट का उल्लेख महत्वपूर्ण रूप में है यथा- 'राजघाट सब ही विधि सुन्दर। मज्जहिं जहां वरन चारिउ नर।। अन्यान्य तात्विक विवेचनों से इस घाट के निकटतम के भू-भाग प्राचीन परम्परा के उद्बोधक एवं पोषक हैं।

ऋणमोचन तीर्थ (घाट)

ब्रह्मकुण्डात्तु भो देवि धनुः सप्तशतेन च।
पूर्वोत्तरदिशा भागे संस्थितम् सरयू जले।।
ऋण मोचन संज्ञं तु सरयू तीर संगतम्।
अत्र स्नानेन जन्तूनां ऋण निर्यातनं भवेत्।।

श्रीशंकर जी श्रीपार्वती जी से बोले- ब्रह्मकुण्ड से सात सौ धनुष की दूरी पर पूर्व और उत्तर दिशामें श्रीसरयू में ऋणमोचन नाम का तीर्थ है। जहाँ पर स्नान करने पर समस्त ऋणों से प्राणी मुक्ति पा जाता है। सम्प्रति इसके उत्तरी भाग में परम रम्य सुमनोहर झुनकी घाट बना है जो कि झुनझुनियां बाबा के नाम पर है। घाट के ऊपर श्रीसीतारामजी की दिव्य झाँकी दर्शनीय है।

(यहाँ पर ऋणमोचन महादेव तथा काञ्चनभवन दर्शनीय हैं।)

श्रीपापमोचन तीर्थ (गोलाघाट)

ऋण मोचन तीर्थात्तु पूर्वतः सरयू जले।
धनुर्विंशतप्रमाणेन पाप मोचन संज्ञकम्।।
माघ कृष्ण चतुर्दश्यां तत्र स्नानं प्रशस्यते।
दानं च मनुजैः कार्य्यं सर्व पाप विशुद्धये।।
अन्यदापि कृते स्नाने सर्व पाप क्षयो भवेत्।

श्रीशंकर जी ने पार्वती से कहा- उक्त ऋणमोचन तीर्थ से बीस धनुष की दूरी पर पूर्व दिशा में पापमोचन नाम का तीर्थ है जिसमें स्नान करते ही कुसंगवस होने वाले पाप समूल नष्ट हो जाते हैं। माघ की कृष्ण चतुर्दशी यहाँ की महत्वपूर्ण वार्षिकी यात्रा है तथा अन्य समय में भी यहाँ का स्नान-दान, पाप-नाशक है- इसीसे इसका पापमोचन नाम पड़ा है।

पूर्व दिन उपवासी रहकर प्रातः सबसे प्रथम यहाँ स्नान कर अनुभव लेने योग्य है। यहाँ पर ही श्रीसद्गुरुसदन है जो आजकल गोला घाट के नाम से प्रसिद्ध है एवं पापमोचन भगवान् दर्शनीय हैं।

सहस्रधारा (लक्ष्मण घाट)

पाप मोचन तीर्थात्तु पर्वते सरयू जखे।
धनुः शत प्रमाणेन वर्तते तीर्थ मुत्तमम्।।
सहस्र धारा संज्ञं तु सर्व किल्विष नाशनम्।
यस्मिन् रामाज्ञया वीरोलक्ष्मणः परवीरहा।।
प्राणमुत्सृज्य योगेन ययौ शेषात्मतां पुरा।
श्रावणे शुक्ल प्रक्षस्य या तिथिः पंचमी भवेत्।।
तस्यामत्र प्रकर्तव्यो नागमुद्दिश्य यत्नतः।
उत्सवो विपुलः सद्भिः शेष पूजा पुरः सरः।।
उत्सवे तु कृते सद्भिः तीर्थे महति मानवैः।
सन्तोष्य च द्विजान् भक्त्या नाग पूजा पुरःसरम्।
सन्तुष्टा फणिनः सर्वे पीडयन्ति न मानुषम्।
वैशाखेमासि ये स्नानं कुर्वन्त्यत्र समाहिताः।।
न तेषां पुनरावृत्तिः कल्प कोटिशतैरपि।

श्री शंकर जी ने पार्वती जी से कहा कि हे देवि! उस पापमोचन से पूर्व दिशा में परम पवित्र, अनन्त पापनाशक सहस्रधारा नाम का तीर्थ सौ धनुष की दूरी पर स्थित है। यहाँ पर श्रीलक्ष्मणजी अन्त में लीला सम्बरण करते हुए योगावलम्बन पूर्वक शेषत्व को प्राप्त हुए थे। यहाँ प्रत्येक श्रद्धालुजन का कर्तव्य है कि नागों की पूजा करते हुए श्रावण शुक्ल पंचमी तिथि में वार्षिक उत्सव यात्रादि करे। पूजन में धान का लावा एवं गौ दुग्ध अत्यावश्यक है। शक्ति के अनुसार दान तथा ब्राह्मण-भोजन भी करना श्रीलक्ष्मण जी एवं शेषजी के प्रसन्नतार्थ आवश्यक है। वैशाख भर यहाँ का स्नान महत्वपूर्ण है। वैशाख में यहाँ स्नान करने वाले प्राणी करोड़ों कल्प बीतने पर भी पुनर्जन्म ग्रहण नहीं करते। शास्त्रों में यहाँ का ऐसा महत्व वर्णित है। विशेषकर नाग-पंचमी को यहाँ की यात्रा करने पर वर्ष पर्यन्त सर्पजनित विष-भय दूर रहता है।

यहाँ नागों की पूजा तथा शेषावतार चतुर्भुजी भगवान् जो ऊपर मन्दिर में अब भी विराजमान हैं- की पूजा यत्न पूर्वक करनी चाहिए। इसे ही लक्ष्मण घाट कहा जाता है। यहीं श्रीलक्ष्मणजी के महाप्रयाण का स्मृति-स्थल है। जो पाप कहीं नहीं कटता है वह सहस्रधारा में स्नान से अवश्य कट जाता है। इसी घाट से संलग्न श्रीनागेश्वर घाट भी है जहाँ यात्री स्नान कर श्रीनागेश्वरनाथ का दर्शन-पूजन करते हैं जो पूर्व वर्णित है।

श्रीतुलसी घाट

श्रीलक्ष्मण घाट के पूर्व सरयू नदी में लगभग दो फर्लांग तक क्षेत्र 'श्रीतुलसी घाट' है। सरयू पुल इसी घाट के मध्य में पड़ता है। अतएव यह घाट आजकल सर्वाधिक आकर्षक एवं सुविधाजनक होने के कारण अत्यधिक आकर्षक एवं भीड़ का केन्द्र है। पक्का घाट होने के कारण भी अधिकांश यात्री यहीं स्नान करना पसन्द करते हैं। इन सब बातों के साथ सबसे बड़ी और महत्त्व की बात यह है कि इस घाट को सरयू किसी भी ऋतु में नहीं छोड़ती है। अर्थात् यहाँ बारहों मास सरयू का प्रवाह प्राप्त होता है।

तुलसी घाट का नामकरण अभी कुछ वर्षों पूर्व, जबकि तुलसी स्मारक निर्माण अभियान प्रारम्भ हुआ, अर्थात् तुलसी उद्यान गो0 श्रीतुलसीदास मार्ग, तुलसी स्मारक भवन (तुलसीचौरा) आदि स्थानों का

निर्माण-कार्य सम्पन्न हुआ है तब किया गया है। इसके पूर्व तुलसी घाट को नयाघाट कहा जाता था। आज भी नयाघाट के रूढ़ हो जाने तथा जानकारी न होने के कारण तुलसी घाट को लोग नयाघाट के नाम से जानते पहचानते हैं। यों सरकारी कागजों में इसे तुलसी घाट ही लिखा जाता है। जनता को चाहिए कि इस घाट को वास्तविक नाम से ही जानें तथा दूसरों को बतायें। जन-जन तक रामचरित पहुँचाने वाले युग पुरुष गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी यहीं सरयू में स्नान करते थे। उन्हीं की स्मृति में इस घाट का नाम तुलसी घाट हुआ है।

श्रीवासुदेव घाट

श्रीतुलसी घाट से दक्षिण-पूर्व एवं श्रीजानकी घाट के उत्तर श्रीवासुदेव घाट है। सरयू का प्रवाह पूर्वोत्तर भाग की ओर हो जाने के कारण अब यह स्नान घाट पक्का नहीं रह गया है। मुहल्ले का नाम वासुदेव घाट है। जो कि घाट की भी स्मृति प्रदान करता है। यहाँ वासुदेव भगवान् के मन्दिर में दर्शन-पूजन से सकल अमंगल दूर होते हैं तथा समस्त देवताओं के पूजन का फल मिलता है। (शिलांग अनुपलब्ध है।)

तस्मादीशानकोणेतु जानकी तीर्थमुत्तमम्।
श्रावणस्य तृतीयायां शुक्लायाञ्च विशेषतः।।
तस्य साम्वत्सरी यात्रा कर्तव्या सुविचक्षणैः।
अत्र दानं तथा होमो जपो ब्राह्मण भोजनम्।।
सर्वमक्षय्यतां याति विष्णु लोके वसेत्सदा।।

श्रीजानकी घाट

श्रीधर्महरिजी से थोड़ी दूर ईशान में उत्तम श्रीजानकी घाट (तीर्थ) है। यहाँ स्नान करने के लिए अपनी परिचारिकाओं सहित श्रीजानकीजी सरयू तट पर आती थीं। उनकी पुण्य-स्मृति के रूप में जानकी घाट की प्रसिद्धि है। वर्तमान समय में रसिक सम्प्रदायाचार्यों का बाहुल्येन इस मुहल्ले में निवास है।

श्रीरामघाट (तीर्थ)

पश्चिमे रामरेखायाः सरयू मुत्तीर्य यत्नतः।
स्नायान्नरो रामतीर्थे सर्वपापक्षयायवै।।

श्रीशंकर जी ने पार्वतीजी से कहा कि हे देवि! राम-रेखा से पश्चिम तरफ सरयू के इस पार उतरकर रामतीर्थ में यत्न पूर्वक प्राणियों को स्नान करना चाहिए। जिससे सारे पाप नष्ट होते हैं। उक्त तीर्थ का महत्व पार्वतीजी के पूछने पर शंकरजी ने वर्णन किया कि-एक समय चैत्र रामनवमी के जन्मोत्सव के दिन सुर, असुर, नर, नाग, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, पिशाच, गुह्यक, सिद्ध, सूत, मागध, बन्दीजन, आदित्यादि ग्रह, समस्त नक्षत्र, इन्द्रादि लोकपाल, शेष, गरूड़, ब्रह्मादि देवता, रुद्रादिभूत एवं मातृकागण जन्मोत्सव मनाने के लिए यहाँ सरयू तट पर उपस्थित हुए। वे सब यहाँ स्नान करके राघवेन्द्र का दर्शन कर विशुद्ध भाव को प्राप्त हुए। यह देखकर सरयू-तीर-वासीजनों को बड़ा कौतुहल हुआ। तदुपरान्त बाहर से आये हुए यात्रीगणों ने ऋषिश्रेष्ठ श्रीवशिष्ठजी से सरयू के माहात्म्य एवं देवताओं के आगमन का कारण पूछा। प्रसन्नता पूर्वक श्रीवशिष्ठजी ने उन सबको श्रीरामतीर्थ के महत्व का वर्णन इस प्रकार सुनाया कि चैत्र शुक्ल नवमी को यहाँ आने वाले महापातकी भी उस परमधाम को पाते हैं जहाँ से फिर लौटकर आना नहीं होता है। इसीसे ही ये सब देवतागण उत्सव पूर्वक आज यहाँ उपस्थित हुए हैं। श्रीवशिष्ठजी के द्वारा इस प्रकार के वाक्यों को सुनकर पुनः विस्मित हो उत्सुकता पूर्वक उन यात्रियों ने पूछा-भगवन्! श्रीरामतीर्थ की महिमा इस समय अच्छी प्रकार से हम सबको सुनाइये। इतना पूछते ही दैवात् एक मयूरी मुख में सर्प को पकड़े हुए उसी जन-संसद में उपस्थित हुई फिर उसके मुख का सर्प रामतीर्थ में गिरकर तीर्थ प्रभाव से तत्काल दिव्य देह को प्राप्त हुआ। सुन्दर चतुर्भुज स्वरूप होकर दिव्य विमान में चढ़कर सबके देखते ही देखते वह परमपद को चला गया। देवताओं ने दुंदुभी बजाई और आकाश से पुष्प वृष्टि होने लगी। ऋषिगण स्वस्त्ययन करते हुए आश्चर्य प्रगट करने लगे। इसी समय लोक हितकारक नारदजी ने वहाँ उपस्थित होकर सर्वजन के समक्ष सुन्दर इतिहास पूर्ण कथानकों द्वारा उस दिव्य रामतीर्थ में विधि पूर्वक स्नान, तर्पण एवं श्रीरामभद्र जू का पूजन किया। उसके फलस्वरूप वे सब तत्क्षण दिव्य चतुर्भुज रूप प्राप्तकर सुन्दर विमानों में चढ़कर सबके सब विष्णुलोक को

चले गये। इस पवित्र इतिहास को भक्ति-पूर्वक पढ़ने व सुनने वाले भुक्ति-मुक्ति प्राप्त करते हैं एवं इसीसे उनके पितरों की तृप्ति तथा उद्धार भी होता है। सत्य का पालन, शौचाचार, कथा श्रवण विद्याध्ययन सुशीलता, क्षमा इत्यादि सभी गुण निष्फल होते हैं यदि श्रीअयोध्या में प्राणी की श्रद्धा न हुई। कलिकाल में विशेषकर प्रातः उठकर 'अयोध्या-अयोध्या' ऐसा नाम उच्चारण एवं हृदय से अयोध्या का ध्यान तथा ग्रन्थ में कहे गये श्रीअयोध्याष्टक का पाठ करने पर प्राणी चाहे जहाँ भी रहे इस दिव्य अयोध्या के प्रभाव से वह निःसन्देह परमपद दिव्य साकेत (बैकुण्ठ धाम) प्राप्त करता है।

तस्माद्दक्षिण दिग्भागे श्रीवाशिष्ठ्यास्तटे शुभम्।
मणि-मण्डित सोपानं दर्शनात्पाप नाशनम्।।
तीर्थ श्रीरामचन्द्रस्य वर्तते हि मनोहरम्।
यस्य दर्शनमात्रेण नरः सिद्धिमवाप्नुयात्।।
चैत्र शुक्ल नवम्यां तु यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।
तस्मादीशान कोणे तु जानकी तीर्थ मुत्तमम्।।
तस्माद्दक्षिण कोणे तु राम तीर्थ मनोहरम्।।

शंकर जी ने पार्वती जी से कहा हे देवि! जानकी तीर्थ से दक्षिण दिशा में सुदिव्य रामतीर्थ प्रतिष्ठित है, जिसकी वार्षिकी यात्रा रामनवमी (चैत्र मास शुक्लपक्ष की नवमी तिथि) कही गई है। श्रीनारदजी एवं वशिष्ठ आदि मुनियों द्वारा महिमा सुनकर श्रीरामभद्रजू ने इस स्थल को पूर्ण सम्मान प्रदान किया। अतः इसका नाम सर्वश्रेष्ठ रामतीर्थ पड़ा।

यहाँ पर वर्तमान समय में श्रीतपसीजी की छावनी से पूर्व चौराहे पर तीर्थ के नाम व पर्व अंकित शिला भी गढ़ी है। परन्तु प्रमाणानुसार यहाँ सरयू स्नान एवं दान ध्यानादि की प्रशस्ति होने से सरयू का जलभाग सामने जहाँ भी मिले वहीं स्नानादि कृत्य करना चाहिए। गोप्रतार घाट से लेकर यहाँ तक के तटवर्ती तीर्थ समुदाय सरयूधारा में ही अन्तर्हित हैं। अतः उन-उन तीर्थों के स्मरण में तत्तत् घाटों पर स्नान, मार्जन श्रीसरयू में ही करना चाहिए। कार्तिक शुक्ल नवमी की यात्रा तथा अयोध्या की पंचकोशी यात्रा का प्रारम्भ

कमलवन एवं नानाविध अन्यान्य पुष्पों से सुसज्जित है। इस परम-पावन तीर्थ में स्नानकर दानादि करने पर प्राणियों को अक्षयफल की प्राप्ति होती है। यहाँ का स्नान मनुष्यों को निःसन्देह पापों से छुटकारा दिला देता है। यहाँ यत्नपूर्वक स्नानकर दीन-दुःखियों को अन्न, वस्त्रादि दान करना चाहिए। वस्त्रादि से सज्जितकर श्रीसीतारामजी की पूजा करनी चाहिए। श्रीभरतजी महाराज श्रीराम वन-गमन-काल में यहीं रहकर अयोध्या का राज्य कार्य देखते थे।

नन्दिग्राम करि पर्ण कुटीरा। कीन्ह निवास धर्म धुर धीरा।
मांगि मांगि आयसु करत राज काज बहु भांति.....................

इत्यादि कहा गया है-

भरत कुण्ड इसी ऐतिहासिक घटना की स्मृति-स्थली है। इस कुण्ड पर स्नानोपरान्त पितृ-तर्पण एवं पिण्डदान का विधान है। विशेषकर सोमवती अमावस्या को यहाँ श्राद्ध करने का अत्यधिक महत्व है। इससे पितरों के साथ ही समस्त देवी-देवता भी परम सन्तुष्ट होते हैं। इसी कुण्ड के दक्षिण में गयावेदी एवं विष्णुपद (गया कूप) भी है जहाँ श्राद्ध करने से गया में श्राद्ध करने का फल प्राप्त होता है। यहीं पर एक संस्कृत विद्यालय भी है। वशिष्ठ गोत्रीय ब्राह्मणों की वस्ती वाहुल्येन यहाँ है और वे ही यहाँ के पुरोहित भी हैं।

यहाँ बस स्टेशन है धर्मशाला, यज्ञशाला, श्रीभरत मन्दिर के साथ ही प्राचीन वट-वृक्ष व कूप महत्वपूर्ण दर्शनीय हैं। वन विभाग द्वारा वृक्षारोपण एवं पर्यटकों की सुख-सुविधायें, आवास, बाजार आदि की समुचित व्यवस्था करने हेतु क्षेत्रीय पर्यटन अधिकारी अयोध्या प्रयत्नशील हैं, शासन की उदारता से शीघ्र ही क्रियान्वयन की आशा पाई जाती है।

'नन्दिग्राम' के अन्तर्गत ही समस्त आकर्षण यहाँ निर्मित होने जा रहे हैं। श्रीकालिका देवी, जटा कुण्ड, अजितजी गयावेदी आदि इससे संलग्न ही चतुर्दिक हैं। जिनके शिलालेख यहाँ मिले हैं। ब्रिटिश शासनकाल में कागजातों में नन्दिग्राम उल्लिखित होता रहा है।

निकटतम तमसानदी, पिशाचमोचन, शत्रुघ्न कुण्ड, मानस तीर्थ (स्थैया) भी यहाँ स्मरणीय है। माण्डव्य ऋषि आश्रम भी कुछ ही दूरी पर था

जहाँ से तमसा निकली है।

श्रीसूर्य कुण्ड

घोषार्कतीर्थ परमं वैतरण्यास्तु दक्षिणे।
वर्तते सुन्दरं देवि सर्व पापापहं सदा।।
यत्र स्नानेन दानेन सूर्यलोके महीयते।
एतत्तीर्थस्य सदृशं नापरं विद्यते क्वचित्।।
व्रणी कुण्ठी दरिद्रोवा दुःखाक्रान्तोऽपियो नरः।
करोति विधिवत्सनानं सर्वान्कामानवाप्नुयात्।।
रविवारे विशेषैण कर्तव्यं स्नान मादरात्।
भाद्रे मासि तथा माघे शुक्लषष्ठ्यां प्रयत्नतः
कर्तव्यं विधिवत्स्नानं सूर्यलोकाभिकांक्षया।
पौषे मासे तथा स्नानं सूर्य वारे विशेषतः।।
सप्त्म्यां रवियुक्तायां स्नानं बहुफलप्रदम्।।

श्रीशंकर जी पार्वती जी से बोले- हे देवि! उस वैतरणी तीर्थ से कुछ दूरी पर दक्षिण दिशा में घोषार्क तीर्थ है जो कि आजकल सूर्यकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ पर विधिपूर्वक स्नान एवं दान करने से समस्त पापों का नाश तथा सूर्यलोक की प्राप्ति होती है। इस तीर्थ की तुलना अन्य किसी तीर्थ के साथ नहीं हो सकती है, क्योंकि यहाँ पर श्रद्धापूर्वक सविधि स्नान से अत्यन्त सांघातिक व्रण, कुष्ठादि रोग एवं दरिद्रता आदि दुःख दूर होते हैं। प्रत्येक रविवार को आदर-पूर्वक यहाँ का स्नान महत्वपूर्ण है। विशेषकर भादौं तथा माघ की षष्ठी को यहाँ अवश्य स्नान करना चाहिए। पौष महीने में सप्तमी तिथि यदि रविवारयुक्त हो तो विशेष फल देने वाली है और पौष के प्रत्येक रविवार को यहाँ का स्नान अभीष्ट देने वाला है।

पार्वतीजी से इस तीर्थ के प्रकट होने की कथा कहते हुए श्रीशंकर जी ने कहा-हे देवि! एक समय सूर्यवंश के चक्रवर्ती सम्राट महाराज घोष मृगयां करते हुए यहाँ पर आये। मृगया करने में श्रान्त होकर यहाँ के वृक्षों के नीचे थोड़ी देर विश्राम करने की इच्छा से रुक गये। राजा के हाथों में पूर्व संचित पापों से कृमियुक्त दूषित व्रण (कुष्ठ) हो गया था जो अत्यन्त प्रयत्न

करने पर भी शान्त नहीं होता था। किन्तु इस स्थान पर आकर अनायास ही वह सब कुष्ठ जल मे हाथ पैर धोने से सर्वथा मिट गया। वे व्रण रहित सुन्दर शरीर वाले हो गये। इस आश्चर्य घटना से चकित होकर ऋषियों एवं पुरोहितों से घटना चक्र का वर्णन करते हुए यहाँ की भूमि की विशेषता राजा ने पूंछी तो मुनियों ने ध्यान योग द्वारा देखकर इस स्थल को सूर्य भगवान् का परम-प्रिय-पुरातन-प्रतिष्ठित तीर्थ बताया। राजा ने श्रद्धा पूर्वक उस तीर्थ में स्नान करके ऋषियों के द्वारा उस तीर्थ की पूजा की और उस तीर्थ का पूर्ण जीर्णोद्धार कराते हुए वहाँ पर सुन्दर रीति से सूर्य भगवान् की प्रतिष्ठा की और कुछ काल वहाँ ही रहकर सूर्य भगवान् की समुचित आराधना की। जिससे भगवान् सूर्यदेव प्रकट हुए। राजा दर्शन पाकर गद्गद स्वर से निम्न श्लोकों द्वारा स्तुति करने लगे-

भगवन्देव देवेश नमस्तुभ्यं चिदात्मने।
नमः सवित्रे सूर्याय जगदानन्ददायिने।।
प्रभा गेहाय देवाय त्रयीमूर्तिमते नमः।
विवस्वते नमस्तुभ्यं योगज्ञाय सदात्मने।।
पराय पररूपाय त्रिलोकतिमिरच्छिदे।
अचिन्त्याय सदा तुभ्यं नमो भास्वर तेजसे।।
योगप्रियाय योगाय योगज्ञाय सदा नमः।
ओंकाराय वषट्काररूपिणे व्रत धारिणे।।
यज्ञाय यजमानाय हविष ऋत्विजे नमः।
रोगघ्नाय स्वरूपाय कमलानन्द दायिने।।
अतिसौम्यातितीक्ष्णाय ग्रहाणां पतये नमः।
सत्रेशय नमस्तुभ्यं भक्तत्राय प्रियात्मने।।
प्रकाशकाय सततं लोकानां प्रिय कारिणे।
प्रसीद प्रणतायाथ मह्यं भक्तिकृते स्वयम्।।

महाराज घोष बोले - देव देवेश! चिदात्मस्वरूप! सम्पूर्ण जगत् को आनन्द देने वाले सूर्यदेव आपके लिए मेरा बार-बार प्रणाम है त्रिदेवों के मूर्तिमान-स्वरूप सम्पूर्ण प्रकाशों के केन्द्र स्वरूप भगवान् विवस्वान के लिए

नमस्कार है। रोगियों के द्वारा ध्यान करने योग्य आत्म-स्वरूप भगवान् सूर्यदेव को नमस्कार है। त्रिलोक के अन्धकार का पूर्ण रूप से नाश करने वाले पर-स्वरूप और परात्पर-स्वरूप अचिन्तनीय भगवान् भास्कर के लिए मेरा सदा नमस्कार है। योगियों के परम प्रिय और योग - स्वरूप से योग को जानने वाले ओंकार और वषट्कार-स्वरूप सम्पूर्ण शुभ व्रतों को धारण करने वाले आपके लिए सदा मेरा नमस्कार है। आपही यज्ञ-स्वरूप आपही यजमान-स्वरूप और यज्ञ के होता भी आपही हैं तथा हविष्-स्वरूप आपके लिए नमस्कार है। सम्पूर्ण रोगों का नाश करने वाले सुन्दर लावण्य-रूप वाले कमल-वन को आनन्दित करने वाले अति सौम्य-स्वरूप, प्रखर किरण वाले, सम्पूर्ण ग्रहों के पति आपके लिए नमस्कार है, यज्ञों के अधीश्वर, भक्तों का त्राण करने वाले, सतत् प्रकाश को देने वाले, सम्पूर्ण आत्माओं के एकमात्र प्रिय, सम्पूर्ण लोकों के हितकारी, भगवान् श्रीसूर्यदेव मैं आपके चरणों में प्रणत हूँ, आप मुझ पर कृपा करते हुए प्रसन्न हों। इस प्रकार राजा के स्तुति करने पर भगवान् सूर्यदेव प्रसन्नता पूर्वक अपनी शिलामयी मूर्ति की प्रतिष्ठा के लिए आदेश देकर स्वयं अंतर्धान हो गये। यहाँ पर आकर प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि इस तीर्थ में विधि-पूर्वक स्नान करके धूप, दीप, नैवेद्यादि द्वारा सूर्यदेव का पूजन करे तथा हाथ-जोड़कर उक्त स्तोत्र का श्रद्धा पूर्वक पाठ करें।

ज्ञातव्य- मन्दिर की सात बार प्रदक्षिणा पूर्वक सूर्यदेव को दण्डवत् प्रणाम करना उचित है। सूर्यदेव का व्रत दिन में एकबार बिना नमक का एक अन्न सेवन करके करना चाहिए। आरोग्यता प्रदान में यह तीर्थ आज भी आादर्श-स्वरूप है, स्वयं दर्शन करके प्रत्यक्ष अनुभव लेने योग्य है।

इस तीर्थ के प्रभाव से स्वर्गीय श्रीदर्शन सिंह महाराजा अयोध्या द्वारा यहाँ पर दर्शन नगर बसाया गया और उन्होंने इस तीर्थ का समुचित जीर्णोद्धार भी कराया। यहाँ पर भादौं षष्ठी में मेला समारोह के साथ होता है और वही सूर्यदेव की वर्षगांठ का दिवस भी है। भादौं शुक्ल षष्ठी के बाद जो रविवार आता है उस दिन बड़ा मेला होता है उसे बड़ा रविवार कहते हैं।

यह सर्वविदित है कि अयोध्या के समस्त सम्राट् सूर्यवंशीय रहे हैं।

अतएव भगवान् सूर्य की प्रशस्ति श्रीअवध में स्वाभाविक है सूर्यवैदिक देवता हैं। यजुर्वेद में कहा गया है कि - 'सहस्र रश्मिः शतधा वर्तमानः प्राणः प्रजानाम् उदयत्त्वेष सूर्य्यः।' अर्थात् समस्त प्राणियों के प्राण-स्वरूप भगवान् सूर्य नित्य प्रातः दृष्टि-पथ पर आते हैं जो सबके लिए सुलभ एवं सुखद हैं। शास्त्रों के अनुसार सूर्य की आराधना से समस्त सिद्धियों की प्राप्ति होती है सभी जाति व धर्म के लोग सकल कष्टों के निवारणार्थ तथा सकल कामना सिद्धिध्यर्थ किसी न किसी रूप में भगवान् सूर्य की आराधना करते हैं। इसी कारण चतुर्दश ज्योतिर्लिंग की भाँति सूर्यदेव के भी द्वादशकुण्ड सम्पूर्ण भारत में विविध नामों से स्थापित हैं। अयोध्या का कुण्ड घोषार्क कुण्ड है जैसा कि इसका विवेचन किया गया है। इसी प्रकार वाराणसी (भदैनी) में लोलार्क कुण्ड है जहाँ लाखों की संख्या में विविध वर्णों, सम्प्रदायों की नारियां, यहाँ तक कि गणिकाएँ भी अपने मनोरथों की पूर्ति हेतु पहुँचती हैं। यहीं स्थिति बहराइच में बालार्क कुण्ड की है। यहाँ प्रतिवर्ष लाखों की भीड़ एकत्रित होती है जिससे बहुत बड़ा मेला लग जाता है। यह बालेमियां के मेला के नाम से प्रसिद्ध है। मुस्लिमकाल में बालेमियां ने यहाँ तप किया और अपना शरीर विसर्जन किया। तभी से बालार्क कुण्ड बालेमियां के नाम से प्रसिद्ध हो गया। आज भी यहाँ सूर्य कुण्ड वर्तमान है किन्तु इसे छिपाकर रखा गया है। यहाँ का वार्षिक मेला बृहस्पतिवार से रविवार तक चलता है जिसमें देश के कोने-कोने से हिन्दु-मुस्लिम आदि सभी धर्मावलम्बी सम्मिलित होते हैं।

सरकार को चाहिए कि इस स्थल की समुचित जाँच-पड़ताल कराये और इसके वास्तविक ऐतिहासिक स्वरूप को फिर से स्थापित कराये। धार्मिक जनता का भी कर्तव्य है कि वह सरकार का ध्यान आकृष्ट करे।

महाभारत वनपर्व तृतीय अध्याय में वर्णित

सूर्य-स्तवन

वैश्म्पायन उवाच-

श्रृणुष्वावहितो राजन् शुचिर्भूत्वा समाहितः।
क्षणञ्च कुरु राजेन्द्र संप्रवक्ष्याम्यशेषतः।।14।।

धौम्येन तु यथा पूर्वं पार्थाय सुमहात्मने।
नामाष्टशतमाख्यातं तच्छुणुष्व महामते।।15।।

ॐ सूर्योऽर्यमा भगत्वष्टापूषार्कः सविता रविः।
गर्भास्तमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः।।16।।

पृथिव्यापश्च तेजश्व खं वायुश्च परायणम्।
सोमो वृहस्पतिः शुक्रोबुधोऽङ्गारक एवं च।।17।।

इन्द्रो विवस्वान् दीप्तांशुः शुचिः शौरिः शनैश्चरः।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कन्दो वैश्रवणोयमः।।18।।

वैद्युतोजाठरश्चाग्निरैन्धन स्तेजसां पतिः।
धर्मध्वजो वेदकर्ता वेदांगो वेदवाहनः।।19।।

कृत त्रेता द्वापरश्च कलिः सर्वमलापहः।
कला काष्ठा मुहूर्ताश्च क्षपा यामस्तथाक्षणः।।20।।

सम्वत्सरकरोऽश्वत्थः कालचक्रो विभावसुः।
पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्तोऽव्यक्तः सनातनः।।21।।

कालाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः।
वरुणः सागरोऽशश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा।।22।।

भूताश्रयो भूतपतिः सर्वलोक नमस्कृतः।
स्रष्टा संवर्तको वह्निः सर्वस्यादिरलोलुपः।।23।।

अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः।
जयो विशालोवरदः सर्वधातुनिषेचिता।।24।।

मनः सुपर्णो भूतादिः शीघ्रगः प्राणधारणः।
धन्वन्तरिर्धूमकेतुरादिदेवोऽदितेः सुतः।।25।।

द्वादशात्माऽरविन्दाक्षः पिता माता पितामहः।
स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम्।।26।।
देहकर्ता प्रशान्तात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः।
चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेयः करुणान्वितः।।27।।
एतद्वै कीर्तनीयस्यसूर्यस्यामिततेजसः।
नामाष्टशतकञ्चेदं प्रोक्तमेतत् स्वयंभुवा।।28।।
सुरगणपितृयक्षसेवितं ह्यसुरनिशाचरसिद्धवन्दितम्।
वरकनकहुताशनप्रभं प्रणिपतितोऽस्मि हिताय भास्करम्।।29।।
सूर्योदये यः सुसमाहितः पठेत्
स पुत्रदारान् धनरत्नसञ्चयान्।
लभेत जातिस्मरतां नरः सदा
धृतिञ्च मेधाञ्च स विन्दते पुमान्।।30।।
इमं स्तवं देववरस्य यो नरः प्रकीर्तयेच्छुचिसुमनाः समाहितं।
विमुच्यते शोकदवाग्निसागरात्लभेत
कामान् मनसायथेप्सितान्।।31।।

अमित तेजस्वी कीर्तनीय भगवान् सूर्यनारायण के ये 108 नाम स्वयं ब्रह्माजी ने कहे हैं।।28।। मैं अपना हित करने केलिए शुद्ध सुवर्ण तथा अग्नि के समान दहकते हुए तथा जिनकी सेवा देवता, पितर एवं यक्ष करते हैं एवं असुर निसाचर और सिद्ध भी जिनकी वन्दना करते हैं उन सूर्यनारायण को प्रणाम करता हूँ।। 29।। जो प्राणी सूर्योदय के समय स्नान कर सावधानी पूर्वक इस स्तोत्र को पढ़ता है वह पुत्र, स्त्री, धन तथा रत्नों के ढेर को पाता है इस स्तोत्र का नित्य पाठ करने से पूर्वजन्म की स्मृति हो सकती है उस मनुष्य को धैर्य तथा बुद्धि की प्राप्ति होती है।।30।। जो मनुष्य स्नान आदि से पवित्र हो अन्तःकरण को पवित्र रख्ता हुआ इस स्तोत्र का भक्ति पूर्वक पाठ करता है वह शोकरूपी समुद्र से मुक्त हो मनचाहे पदार्थ को पाता है।।31।।

भगवान् सूर्य से समुत्पन्न मानसी सृष्टि के रूप मे स्वायम्भू मनु उत्पन्न हुए। मनु से श्रीइक्ष्वाकु महाराज की उत्पत्ति हुई। जिन्होंने अयोध्या

में राजधानी बनाई और सरयू नदी को मानसरोवर से भारतवर्ष में ले आये। इक्ष्वाकु से बिन्दु सृष्टि का समारम्भ होता है। गीताकार के शब्दों में विशुद्ध ज्ञान का संचार संसार में इन्हीं के माध्यम से किया गया।

यथा- विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।

श्रीबाल्मीकि रामायणकार ने सूर्यवंशियों का परिचय प्रस्तुत करते हुए कहा कि- इक्ष्वाकु वंश प्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः।

भगवान् श्रीकृष्ण श्रीमद्भागवत में अपने पूर्वजन्म का स्मरण कराते हुए रामलीला का प्रदर्शन गोप-गोपियों के समक्ष प्रस्तुत किये हैं। कामवन में सेतुबन्ध-रामेश्वर आदि तीर्थ इसके साक्षी हैं।

श्रीसुग्रीव कुण्ड, श्रीविभीषण कुण्ड

शंकर उवाच-

देवधर्महरिस्थानाद्दक्षिणे दिग्दले स्थितम्।
नाम्ना लोके तु विख्यातं तीर्थ सुग्रीव कुण्डकम्।।
सुग्रीवकुण्डाद्वायव्ये सुन्दरं च मनोहरम्।
कुण्डं विभीषणस्यापि सर्वकामफलप्रदम्।
तयोर्यात्रातु कर्तव्या नरैः श्रद्धासमन्वितैः।।
चैत्र शुक्ल नवम्यां तु तयोर्यात्रा तु वार्षिकी।।

श्रीशंकर जी ने कहा-हे देवि! पूर्वोक्त धर्महरि के स्थान से दक्षिण दिशा में कुछ दूर पर (बरगदैया मुहल्ले में) सुग्रीव कुण्ड तीर्थ है। और सुग्रीव कुण्ड से वायव्य दिशा में (कनक भवन से उत्तर) अत्यन्त सुन्दर मनोहर श्रीविभीषण कुण्ड है। स्नान, दर्शन, पूजन करने से उक्त दोनों तीर्थ वाञ्छित फल प्रदान करने वाले हैं जो स्मरणीय एवं दर्शनीय हैं।

स्वर्णखनि (सोनखर कुण्ड)

दक्षिणे हनुमत्कुण्डात्स्वर्णस्यखनिरुत्तमा।
यत्र चक्रे स्वर्णवृष्टिं कुबेरो रघुजाब्दयात्।।
अत्र स्नानेन दानेन नृणां लक्ष्मीः प्रजायते।
वैशाखे शुक्ल द्वादश्यां यात्रा सांवत्सरी भवेत्।।
आश्विने शुक्लपक्षे च दशम्यां स्नानमाचरेत्।

सर्वकाम फलप्राप्तिर्जायते च नृणां भुवि।।

हनुमत्कुण्ड से दक्षिण दिशा में (बाबा रघुनाथ दासजी की छावनी के पास) स्वर्णखनि नामक तीर्थ है। यहाँ महाराज श्रीरघुजी के भय से कुबेर ने स्वर्णवृष्टि की थी। यहाँ स्नान, दान करने से मनुष्य लक्ष्मीवान् हो जाता है। वैशाख शुक्ल द्वादशी, आश्विन शुक्ल दशमी एवं नाम पंचमी को इसकी वार्षिक यात्रायें होती हैं। इन तिथियों में यात्रा, दर्शन, स्नान, स्वर्णादि दान करने से सर्व काम, फल प्राप्ति होती है। श्रीपार्वतीजी ने कहा-भगवन्! कुबेर ने स्वर्णमयी वर्षा क्यों की, सो कृपाकर कहिये।

श्रीशंकरजी ने कहा- हे देवि! पूर्वकाल में महान् प्रतापी सम्राट श्रीरघु अयोध्या के राजा थे। श्रीवशिष्ठजी की आज्ञा से महाराज श्रीरघु ने सेना को साथ लेकर विजय के लिए प्रस्थान किया। नाना देश-देशान्तरों में जाकर उद्दण्ड अधार्मिक राजाओं का मान-मर्दन कर धर्म संस्थापना करते हुए राजाओं से कर-रूप में अनन्त धन संग्रह किया और अयोध्या आकर महाराज वशिष्ठजी की आज्ञा से वामदेव, कश्यप, गालब, भरद्वाज आदि महर्षियों को आमन्त्रित करके प्रार्थना की कि हे मुनिवरों! इस समय हमें कौन से यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए। ऋषियों ने विचारकर कहा राजन्! विश्वजित यज्ञ कीजिये। तब वशिष्ठजी की आज्ञानुसार बड़े धूमधाम से श्रीसरयू तट पर यज्ञ हुआ और महाराज श्रीरघु ने सर्वस्व दान कर दिया, केवल छत्र और चमर ही राज-चिह्न अवशेष रह गये, राजमहल के स्वर्ण रजतमय पात्रादि समस्त वस्तुयें भी यथा-योग्य पात्रों को दे दी थीं मृत्तिका के पात्रों से अपना निर्वाह करते थे। इसी अवसर पर श्रीवरतन्तुजी के शिष्य श्रीकौत्सजी अयोध्या आये। महाराज रघु ने मृत्तिका के पात्रों द्वारा ही अर्घ्य पाद्यादि प्रदानकर कौत्सजी की पूजा करके प्रार्थना की कि विशेष सेवा के लिए आज्ञा प्रदान कीजिए। श्रीकौत्सजी ने कहा- राजन्! आपका कल्याण हो। मैंने अपने गुरुदेव से विद्या पढ़ी है और पढ़ने के बाद मैं गुरु दक्षिणा देने के लिए धन की याचना करने आपके पास आया हूँ। पर आपने सर्वस्व दान कर दिया है अतः अव आपसे कुछ भी याचना करना ठीक नहीं है। श्रीरघुजी ने हाथ जोड़कर कहा- हे भगवन्! आप कृपा कर अतिथिशाला में एकदिन

ठहरिये तब तक कुछ उपाय किया जायगा। हे देवि! इस प्रकार श्रीकौत्सजी को आदर पूर्वक ठहराया और मन्त्रियों से मन्त्रणाकर निश्चय किया कि कुबेर के ऊपर चढ़ाई करके उनसे धन लाया जाय। इस निश्चय को जानकर कुबेर ने महाराज रघु के आने से प्रथम ही अयोध्या में स्वर्ण की वृष्टि करदी। महाराज रघुने वह समस्त धन श्रीकौत्स को अर्पण किया पर श्रीकौत्सजी ने केवल चौदह करोड़ स्वर्ण मुद्रायें गुरु दक्षिणार्थ ग्रहण कीं। शेष धन अन्य ब्राह्मणों को सादर दान कर दिया। श्रीरघु की पवित्र निष्ठा देखकर श्रीकौत्स जी बोले- हे राजन्! दिव्य गुण सम्पन्न एवं वंश की कीर्ति को बढ़ाने वाला पुत्र तुम्हें प्राप्त हो। यहाँ पर सब पापों को हरने वाला एवं अभीष्ठ प्रदान करने वाला परमदिव्य स्वर्णखनि तीर्थ हो, जहाँ पर स्नान, दान करने वाले धन-धान्य सम्पन्न होंगे। वैशाख शुक्ल द्वादशी एवं आश्विन शुक्ल दशमी को साम्वत्सरी यात्रा तथा स्नान दानादि करने से मनुष्यों को अभीष्ट फलों की प्राप्ति मेरे आशीर्वाद से होगी। हे देवि! इस प्रकार वरदान देकर श्रीकौत्सजी चले गये और उनके वरदान से तीर्थ की महिमा पूर्ण सत्य हुई। (महाराज श्रीरघु के संस्मरण के रूप में स्वर्णखनि कुण्ड आज भी वर्तमान है।)

श्रीयज्ञवेदी

खन्या दक्षिण दिग्भागे यज्ञवेदी प्रकीर्तिता।
यत्र यज्ञो वभूवाथ रामस्य परमात्मनः।।

उक्त स्वर्णखनि से ठीक दक्षिण दिशा में यज्ञवेदी नामका तीर्थ है जहाँ पर परब्रह्म श्रीरामजी ने स्वयं अनन्त यज्ञों को सम्पन्न किया था। यह अति पवित्र दवं दर्शनीय है।

श्रीअग्नि कुण्ड

तस्याः पश्चिम दिग्भागे अग्निकुण्डं मनोहरम्।
नानारत्नैर्विचित्रं च कान्त्या तामिस्र नाशनम्।।

उक्त तीर्थ से पश्चिम दिशा में मनोहर रत्नों द्वारा विचित्र सजाया हुआ अज्ञान, अन्धकारनाशक अग्निकुण्ड नामक तीर्थ है। जहाँ पर सहस्रों हरिभक्त ब्राह्मण निवास करते हैं। वेद पारंगत ब्राह्मणों ने दाक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि एवं हवनीयाग्नि की वहीं पर स्थापना की थी। अगहन कृष्ण

प्रतिपद् को इसकी वार्षिकी यात्रा करनी चाहिये। यह कुण्ड जीर्णोद्धार के योग्य है।

श्रीतिलोदकी संगम

यज्ञवेद्या दक्षिणे तु संगमः सिद्ध सेवितः।
तिलोदकी सरय्वास्तु संगत्या भुवि विश्रुतः।।
तत्र स्नात्वा महाभागे भवन्ति विरुजो नरः।

श्रीशंकरजी ने पार्वती से कहा- हे देवि! उक्त यज्ञवेदी के दक्षिण दिशा में सिद्धजनों से सेवित तिलोदकी एवं सरयू संगम का प्रसिद्ध तीर्थ है। जहाँ पर स्नान मात्र से प्राणी रोग रहित हो जाता है। यहाँ की वार्षिकी यात्रा मनुष्य मात्र को भादौं की अमावस्या के दिन करनी चाहिये। इस नदी को श्रीरामचन्द्र जी ने अपने अगणित हाथियों को जल पिलाने की सुविधार्थ स्वयं प्रकट किया था। इस नदी के जल का वर्ण तिलके सदृश श्यामता युक्त होने से यह नदी तिलोदकी नाम से प्रसिद्ध हुई (वर्तमान समय में वर्षा ऋतु में इस नदी का दृश्य किसी रूप में देखने को मिलता है।)

श्रीअशोक वाटिका

तिलोदकी सरय्वास्तु पश्चिमे च तटे स्थिता।
अशोकवाटिका नाम्ना रामचन्द्रस्य शोभने।।

उक्त तिलोदकी संगम से पश्चिम तरफ श्रीरामचन्द्र जी की अशोक वाटिका सुशोभित है। जिसमें चन्दन, गूगुल, धूप, नारियल, देवदारू, चम्पक, आम्र आदि नानाविध रसाल एवं सब ऋतुओं में फलने वाली सुन्दर वृक्षावली इन्द्रवन को भी लज्जित कर आमोद बढ़ाने वाली भली प्रकार सजाई गई थी। श्रीराघवेन्द्र सरकार स्वयं जिसमें विहार करने आते थे, परम विश्रामप्रद यह वाटिका दर्शनीय है।

श्रीसीता कुण्ड

तस्यां तु वाटिकायां च सीताकुण्डं विराजते।
सीतयाकिल तत्कुण्डं स्वयमेव विनिर्मितम्।।
रामस्य वरदानेन महाफल निधी कृतम्।
रामं ससीतं सम्पूज्य मुक्तः स्यान्नात्र संशयः।।

अशोक वाटिका के भीतर सीताकुण्ड नाम का तीर्थ है। जिसे

श्रीसीताजी ने उल्लास पूर्वक अपने कर-कमलों से ही उद्घाटित किया है। इस तीर्थ को श्रीरामजी ने अपनी प्रसन्नता के उद्रेक में वरदानों द्वारा गौरवान्वित किया है। जहाँ पर स्नान करने वाला प्राणी सर्वथा कल्याण-भाजन होकर मोक्ष पाता है। इसकी वार्षिकी यात्रा अगहन कृष्ण चतुर्दशी एवं वैशाख शुक्ल नवमी को होती है। कुण्ड में स्नान एवं श्रीसीतारामजी का पूजन करके प्रेमीजनों को अयोध्या-वास का यथार्थ फल-लाभ करना चाहिये।

श्रीविद्या कुण्ड, श्रीविद्यादेवी

अतः परं प्रवक्ष्यामि तीर्थमन्यच्छुभावहम्।
सीताकुण्डात्पश्चिमे तु महाविद्याभिधं महत्।।
तस्य दर्शन मात्रेण करस्थाः सर्वसिद्धयः।

श्रीशंकरजी ने कहा-हे देवि! उक्त सीताकुण्ड के पश्चिम दिशा में महाविद्या तीर्थ (विद्याकुण्ड) है जिसके दर्शन व स्नान से सम्पूर्ण सिद्धियां सहज में ही प्राप्त होती है प्रथम विद्या कुण्ड में स्नान करके पुनः विद्यादेवी का दर्शन करे और धूप, दीप, नैवेद्यादि द्वारा भक्ति-पूर्वक देवी का पूजन करे। ॐ नमो महाविद्यायै' इस मन्त्र से पूजन करके हाथ-जोड़कर निम्न स्तोत्र द्वारा प्रार्थना करे।

ये त्वां देवि महेश्वरि प्रतिदिनं ध्यायन्ति पूजा परास्ते।
ते मत्तगजा मदच्युतिहत द्वारान्तधूलीचयाः।
ये त्वन्मन्त्रवरं जपन्ति विधिवत्ते देवि लोकेश्वराः।
ये निष्कामतया भजन्ति भवतीं ते मुक्तिभाजोऽचिरात्।।

हे देवि! प्रतिदिन आपका ध्यान करते हुए जो सज्जन पूजन करते हैं वे महान् अनर्थकर मद, मात्सर्य आदिक दुष्टों के प्रहार से सर्वथा मुक्त रहते हैं और विधि-पूर्वक आपके मन्त्रों का जप करने वाला प्राणी सर्वथा सम्पूर्ण लोकों का आधिपत्य प्राप्त करता है। हे महेश्वरि! निष्काम भाव से आपकी आराधना एवं भजन करने वाले प्राणी तत्काल मुक्ति को ही प्राप्त होते हैं पूजन के उपरान्त इस स्तोत्र को पढ़कर एकबार प्रदक्षिक्षां करे पुनः श्रद्धा पूर्वक विद्यादेवी को प्रणाम करे एवं यहाँ पर अपने इष्ट मन्त्र का जप

एवं पुरश्चरण करना शीघ्र सिद्धिप्रद है।

यहाँ की वार्षिक यात्रा आश्विन शुक्ल नवरात्रि की अष्टमी है प्रतिमास की अष्टमी को भी यहाँ का दर्शन यात्रा करना प्राणियों का कर्तव्य है। दर्शन, पूजन, यात्रा पर ये विद्याबुद्धि एवं ऐश्वर्य को बढ़ाने वाली है।

सिद्धपीठ

अत्र प्रजप्तो यत्नेन मन्त्रः सर्वोऽपिसिध्यति।

सिद्धपीठे परोमोक्षो वशीकरण मुत्तमम्।।

जपो होमस्तथा दानं सर्वमक्षयतं व्रजेत्।

विद्याकुण्ड के पश्चिम तरफ सिद्धपीठ (रामचौतरा) है। यहाँ पर मन्त्रादि का अनुष्ठान जप, होम, तर्पण द्वारा करने पर बहुत शीघ्र सिद्धिप्रद होता है। इस सिद्धपीठ में मारण, मोहन, वशीकरणादि सिद्धियां शीघ्र प्राप्त होती हैं। निष्कामतः अपने इष्ट मन्त्र की आराधना करने पर सद्यः मोक्ष प्राप्त होता है। अतएव सिद्धपीठ इसका नाम है।

खर्जुकुण्ड (खजुहा)

श्रीशंकर उवाच-

विद्याकुण्डाद्दक्षिणे तु खर्जुकुण्डं च विद्यते।

यत्र स्नात्वा नरो रोगात्कण्ड्वादिभ्यो विमुच्यते।।

रविवारे तस्य यात्रा कर्तव्या सुविचक्षणैः।

भगवान् श्रीशंकरजी ने पार्वतीजी से कहा- हे देवि! उस विद्याकुण्ड से दक्षिण दिशा में खर्जुकुण्ड नाम का तीर्थ विद्यमान है। जहाँ पर रविवार को स्नान मात्र से दाद, खाज आदिक चर्मरोग निवृत्त होते हैं और केवल यहाँ की मिट्टी लेप करनें से भी चर्मरोग दूर होते हैं।

श्रीमणि पर्वत

विद्याकुण्डात्पश्चिमे च पर्वतो राजते प्रिये।

नानावृक्षलतागुल्मैः परितः परिवारितः।।

जानकीप्रीति जननः पर्वतोमणि संज्ञकः।

तदुपरान्त श्रीशंकर जी ने कहा- हे देवि! उस विद्याकुण्ड के पश्चिम भाग में मणिवर्तन नामक तीर्थस्थल है। जहाँ श्रीजानकीजी की प्रसन्नतावर्द्धन के लिए गरुड़ द्वारा देवलोक से मँगाकर दिव्यमणियों का ढ़ेर

लगाकर श्रीराघवेन्द्र द्वारा पर्वताकार सजाया गया। यहाँ पर सखियों से युक्त होकर कन्दुक (गेंद) आदि की क्रीड़ा के लिए श्रीजनकनन्दनी स्वयं आकर उस पर्वत पर आकर आमोद क्रीड़ा करती हैं। जिसके दर्शन-मात्र से प्राणियों की पापराशि तत्क्षण नष्ट होती है। यहाँ पर प्रतिवर्ष श्रावण शुक्ल तृतीया को झूलन-दर्शन का मेला प्रसिद्ध है। पर्वत के ऊपर से श्रीअयोध्या का अपूर्व दृश्य देखने योग्य है।

श्रीगणेश कुण्ड

पर्वताद्दक्षिणे भागे गाणेशं कुण्डमुत्तमम्।
तत्रस्नानेन दानेन वाञ्छितं फलमाप्नुयात्।।
माघेमासि चतुर्थ्यां तु कृष्णपक्षे वरानने।
यात्रा साम्वत्सरी कार्या सर्वपापप्रणाशिनी।

मणिपर्वत से दक्षिण भाग में अत्यन्त निकट ही गणेशकुण्ड है। जहाँ पर माघ कृष्ण चतुर्थी को स्नान, पूजन कर्तव्य है। पूजन में 'ॐ नमः श्रीगणेशाय' इस मन्त्र का प्रयोग करते हुए प्रसन्नता पूर्वक श्रीगणेशजी के प्रीत्यर्थ स्तुति करनी चाहिए।

यथा- सिन्दूरपूरारुणवारणास्यो, दास्योद्यतानां सकलार्थदाता।
विद्याब्धिमज्जज्जनतावलंबो लंबोदरो में ह्रदये सदाऽस्तु।।
नीलांजनाभं गजतुण्डवक्त्रं, शत्रुं गृहीत्वा निजपुष्करेण।
उच्चालयन्तं गगने गणेशं ध्यायेच्चनित्यं विधिवन्मनुष्यः।।

सिन्दूर से परिलिप्त मुखारविन्द, सेवापरायणजनों के लिए सर्वार्थ सिद्धि देने वाले भगवान् गजानन सच्छास्त्रों में अवगाहन करने वाले सज्जनों के एकमात्र अवलम्बन हैं वे मेरे ह्रत्कमल में सदा निवास करें। भगवान् गजानन अपने हस्तिशुण्ड द्वारा नीलगिरि सदृश समूह को पकड़कर आकाश मण्डल में फेंकते हुए जैसे प्रतीयमान हो रहे हैं। ऐसा चिन्तवन करता हुआ भावुक मनुष्य भगवान् गणेश की विधिपूर्वक आराधना करे। पूजनोपरान्त उक्त गणेश मन्त्र को जपता हुआ हाथ-जोड़कर उपरोक्त श्लोक प्राथर्ना पूर्वक प्रणाम करें।

श्रीदशरथ कुण्ड, श्रीकौशिल्या कुण्ड

गणेशात्पश्चिमे भागे राज्ञो दशरथस्य हि।

कुण्डं मनोरमं रम्यं मणिसोपाननिर्मितम्।।
तस्मात्पश्चिम दिग्भागे कौशिल्याकुण्डमुत्तमम्।
भाद्रेमासि पूर्णिमायां द्वयोर्यात्रा शुभप्रदा।।

श्रीशंकरजी ने पार्वती से कहा- हे देवि! उक्त गणेश कुण्ड से पश्चिम दिशा में सुन्दर रमणीय चक्रवर्ती श्रीदशरथजी महाराज का कुण्ड है और उसके पश्चिम तरफ श्रीकौशिल्या अम्बाजी का कुण्ड सुप्रसिद्ध है दोनों कुण्डों की साम्वत्सरी यात्रा एवं स्नान दानादि भाद्र पूर्णिमा को करना चाहिए जिससे सर्वसौख्य की प्राप्ति होती है।

श्रीसुमित्रा कुण्ड, श्रीभरत कुण्ड

सुमित्रायास्तथा कुण्डं पश्चिमे शुभदायकम्।
भरतेन कृतं कुण्डं दक्षिणे पाप नाशनम्।।
यात्राकुण्डद्वयोः कार्या भाद्रदर्शे शुभावहा।

उसके पश्चिम दिशा में श्रीसुमित्रा कुण्ड सुशोभित है और उसके दक्षिण दिशा में श्रीभरत द्वारा निर्मित भरत कुण्ड (कैकेयी कुण्ड) विराजित है। इन दोनों कुण्डों की वार्षिकी यात्रा भाद्र अमावस्या को कही गई है। इन कुण्डों में स्नान दानादि करने से समस्त पाप नाश होते हैं।

श्रीदुर्भरसर, श्रीमहाभरसर

तस्मान्नैऋत्य दिग्भागे दुर्भराख्यं सरःशुभम्।
महाभरे परे तीर्थे तथा दुर्भर संज्ञके।।
भाद्रे कृष्णचतुर्दश्यां यः स्नायाच्छूद्धयान्वितः।
शिवपूजां विष्णुपूजां द्विजपूजां विशेषतः।।
यः करोति नरो भक्त्या वाञ्छितार्थमिहाप्नुयात्।

उक्त तीर्थ नैर्ऋत्य दिशा में दुर्भरसर तथा महाभरसर प्रतिष्ठित हैं जिनकी वार्षिकी यात्रा श्रद्धापूर्वक भाद्रकृष्ण चतुर्दशी को करनी चाहिए तथा यहाँ पर स्नान, दान करके श्रीविष्णु भगवान् की तथा शंकरजी की और ब्राह्मणों की पूजा विशेषकर भोजनादि द्वारा करनी चाहिए। हे देवि! एकबार इसी स्थान पर भगवान् विष्णु और हम दोनों मिलकर कुछ मन्त्रणा कर रहे थे, इतने ही में महाभर और दुर्भर दोनों भाई कमल पुष्पों का भार कन्धों पर लिए हुए आये और पुष्प भार को वहीं रखकर विश्राम करने लगे। दिव्य पुष्पों

को देखकर हम दोनो प्रसन्न हो गये और दर्शन देकर उन्हें कृतार्थ करते हुए वरदान दिया कि- 'यहाँ पर तुम्हारे दोनों के नाम से दुर्भरसर एवं महाभरसर तीर्थ होंगे जिनमें स्नान करने वाले स्त्री-पुरुष वाञ्छित फलों को प्राप्त करेंगे। तब से ही यहाँ ये दोनों परम पवित्र तीर्थ हुए। ये कुण्ड केवल स्मरणीय है।

योगिनी कुण्ड

महाभारस्तु वायव्ये योगिनीकुंडमुत्तमम्।
यत्रासते चतुः षष्ठिर्योगिन्योन्यत्रसंस्थिताः।
सर्वार्थसिद्धिदं नृणां स्त्रीणां चैव विशेषतः।

उस महाभर तीर्थ से वायव्य दिशा में पवित्र योगिनीकुण्ड नामक तीर्थ है जिसके जल में चौसठ योगिनियों का सदा निवास रहता है। इस कुण्ड में स्नान करने से सम्पूर्ण सिद्धियाँ यक्षिणियों द्वारा पुरुषों को विशेषतया स्त्रीजनों को प्राप्त होती हैं। (यक्षिणी सिद्ध करने वालों के लिए यह उत्तम शीघ्र फलप्रद क्षेत्र है) यह कुण्ड इण्डस्ट्रियल स्कूल के बगल अमरूद के बाग में था।

श्रीउर्वशी कुण्ड

योगिनीकुंडतः पूर्वमुर्वशीकुंडमुत्तमम्।
अत्रस्नानं तु यो कुर्यात्भो देवि विधिवन्नरः।।
सौन्दर्य परमं तस्य भवेत्तत्र न संशयः।
भाद्रशुक्लतृतीयायां यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।

उस योगिनीकुण्ड से पूर्व दिशा में उर्वशीकुण्ड प्रतिष्ठित है। यहाँ पर जो भी विधिपूर्वक स्नान, दान करते हैं वे परम सौन्दर्य प्राप्त करते हैं इसकी वार्षिकी यात्रा भाद्रशुक्ल तृतीया कही गई है। यह कुण्ड कालरा अस्पतालके पास में था, अब यहाँ केवल पत्थर गड़ा है कुण्ड पट गया, जिस पर डिग्री कालेज निर्मित है।

श्रीवृहस्पति कुण्ड

पूर्वस्मिन्नुर्वशीकुंडात्तीर्थं चाति मनोहरम्।
ख्यातं वृहस्पतेः कुंडं पंकजैरुपशोभितम्।।
सर्वपाप प्रशमनं पुण्यामृत तरंगकम्।

यत्र साक्षात्सुरगुरुर्निवासं किल निर्ममे।।
यत्र स्नानेन दानेन नरो मुच्येत किल्विषात्।
भाद्र शुक्ले च पञ्चम्यां यात्रा तत्र फलप्रदा।।
अन्यदापि गुरोर्वारे स्नानं बहुफलप्रदम्।
भवेत्वृहस्पतेः पीड़ा यस्य गोचर वेधतः।।
तेनात्र विधिवत्स्नानं कर्त्तव्यं सुप्रयत्नतः।
होमं च कारयेतत्र ग्रहजाप्यं विधानतः।।
एवं कृते न सन्देहो, ग्रहपीड़ा विनश्यति।

श्रीशंकरजी ने कहा- हे देवि! उक्त उर्वशी तीर्थ से पूर्व दिशा में कुछ ही दूर पर श्रीवृहस्पति कुण्ड सर्वोत्कृष्ट तीर्थ है। यहाँ पर इन्द्रादिक देव एवं मुनिगणों ने भी यत्नपूर्वक स्नान कर अभीष्ट सिद्धि लाभ किया है। इस तीर्थ मे स्नान, दान करके मनुष्य पापों से छुटकारा पाता है, इसकी वार्षिकी यात्रा भादौं शुक्ल पंचमी (ऋषिपंचमी) को करनी चाहिए और प्रत्येक गुरुवार को भी यहाँ स्नान करना स्थानीय लोगों का कर्तव्य है। जिससे सब पापों से छूटकर विष्णुलोक में सदा निवास मिलता है। यदि किसी की जन्म-कुण्डली में बृहस्पति की कष्टप्रद दशा हो तो वह विधिपूर्वक यहाँ पर अपने नामोच्चारण सहित संकल्प करके प्रति गुरुवार को स्नान करे और विधिपूर्वक बृहस्पति के मन्त्र से हवन एवं जप करे। सामर्थ्यानुसार सुवर्णमयी श्रीबृहस्पतिजी की मूर्ति निर्माण कराकर पीताम्बर धारण करावे और आभूषणों से अलंकृत पर पूजन करे। पुनः उस मूर्ति को किसी पवित्र वेदज्ञ ब्राह्मण को अपनी पीड़ा शान्ति के लिए प्रदान करे। इस प्रकार आचरण करने पर बृहस्पति ग्रह की पीड़ा निःसन्देह दूर होती है। धाम-निवासी अकिञ्चनजनों को यह तीर्थ दर्शन, स्नान प्रणिपात एवं श्रद्धाञ्जलि अर्पणामात्र से ही सम्पूर्ण बाधाओं से मुक्त करता है। इस कुण्ड की दशा अत्यन्त दयनीय है।

श्रीरुक्मिणी कुण्ड

तद्दक्षिणे च भो देवि रुक्मिणी कुडमुत्तमम्।
तत्र साम्वत्सरी यात्रा कर्त्तव्या सुप्रयत्नतः।

ऊर्जकृष्णनवम्यां तु सर्वपापापनुत्तये।
पुत्रवाञ्जायते बन्ध्यो लच्मीवान्नात्र संशयः।।

उस बृहस्पति कुण्ड से अति निकट दक्षिण दिशा में उत्तम रुक्मिणी कुण्ड नामक तीर्थ है। यहाँ पर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिका से रुक्मिणी सहित तीर्थ यात्रा के निमित्त पधारकर पूर्वजन्म की कीर्ति का स्मरण कराने वाले तीर्थों का कुछ काल यहाँ निवास करके जीर्णोद्धार कराये तथा अपने आगमन का स्मारक श्रीरुक्मिणीजी के नाम का कुण्ड स्थापित किया। इसमें स्नान, दान, होम, वैष्णव मन्त्रों का जप, ब्राह्मण-पूजन एवं विष्णु पूजन करने कराने वाले प्राणियों के प्रति भगवान् श्रीकृष्ण के स्नेहपूर्वक दिये हुए वरदान के फलस्वरूप अनन्त फल देने वाला होता है। इसकी साम्वत्सरी यात्रा कार्तिक कृष्ण नवमी सब पापों को नाश करने वाली एवं धन, पुत्र, लक्ष्मी देने वाली निश्चय की गई है। यह कुण्ड क्षीरेश्वरनाथ के दक्षिण अमरूद वाटिका में दैन्य दशाग्रस्त है।

श्रीक्षीरसागर

उत्तरे रुक्मिणी कुंडात्क्षीरोदकमितिस्मृतम्।
क्षीरोदकमितिस्थानं सर्वदुःखौघनाशनम्।।
पुरा दशरथो राजा पुत्रेष्टि नाम नामतः।
चकार विधिवत्यज्ञं पुत्रार्थं यत्र चासकृत्।।
तत्र स्नात्वा नरो धीमान् विजितेन्द्रिय आदरात्।
सर्वान्कामानवाप्नोति पुत्रांश्च बहु विश्रुतान्।।
आश्विने शुक्लपक्षस्य चैकादश्यां सुलोचने।

उस रुक्मिणी कुण्ड से उत्तर दिशा में क्षीरसागर नामक तीर्थ प्रसिद्ध है जहाँ पर महाराज श्रीदशरथजी ने अनेकों यज्ञ सम्पन्न किये थे। यहाँ पर ही पुत्रेष्टि यज्ञ द्वारा प्रसन्न हो अग्निदेव ने दिव्य स्वर्णपात्र में पवित्र तेज सम्पन्न हविष् प्रदान किया था। जिसको प्राप्तकर चक्रवर्ती महाराजजी ने यथोचित विभाजन कर अपनी रानियों को प्रदान किया था। तदनुसार ही श्रीराम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न ये पुत्ररत्न प्राप्त किये थे।

(इस दिव्य तीर्थ की दुरवस्था सर्वथा मिटाकर इसमें स्नान दानादि

करना सबका कर्तव्य है।) इसकी वार्षिकी यात्रा आश्विन शुक्ल एकादशी कही गई है।

कल्प भेद से यहाँ और मनोरमा तीर्थ दोनों स्थानों पर पुत्रेष्टि यज्ञ होने का उल्लेख है अतएव वाल्मीकि रामायण से कोई विरोध नहीं है। मनोरमा तीर्थ में इसकी विशेष विवेचना है।

श्रीक्षीरेश्वरजी

क्षीरोदकात्पश्चिमे तु नाम्ना क्षीरेश्वरः स्मृतः।
राजा दशरथेनैव स्थापितोऽहं पुरा प्रिये।।
पुजा तस्य प्रकर्त्तव्या धूपदीप पुरस्सरः।
स्तुतिः प्रसन्नचित्तेन कर्त्तव्या च मनीषिणा।।

क्षीरसागर के निकट पश्चिम तरफ क्षीरेश्वर नाम से मैं प्रसिद्ध हूँ। जिनकी स्थापना स्वयं राजा दशरथ ने की है। धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूलादि द्वारा प्रसन्नचित्त से इनका पूजन करना चाहिए। पश्चात् हाथ-जोड़कर इस श्लोक से स्तुति करे-

यथा- **कैलाशो निलयः सखा धनपतिर्मौलौ सुधादीधिति,**
मूँध्निस्वर्ग तरंगिणी विहरणं कल्पद्रुमाणां वनम्।
तद्विश्वेश्वर नः क्षमस्व सगर्णत्वाहूय पीठेस्थितं,
द्वितैर्बिल्वदलैर्जलाक्षतफलैर्यद्वञ्चयामो वयम्।

हे प्रभो! सर्व सुख देने वाला कैलाश शिखर आपका स्थान है, कुबेरजी आपके सखा हैं; जटा मुकट में अमृतमय चन्द्रमा सदा सुशोभित रहता है तथा आपके मस्तक पर श्रीगंगाजी रहती हैं। कल्पवृक्षों के वन में आप विहार करने वाले हैं। इस प्रकार समस्त सुखदायक ऐश्वर्य आपकी सेवा में सदा उपस्थित हैं तो हे विश्वेश्वर! पार्षदों के सहित आपको बुलाकर जो मैंने दो-तीन बिल्वपत्र, जल, अक्षत एवं फलों द्वारा आपकी पूजा की यह वञ्चना ही है हम आपका पूजन करने में समर्थ नहीं हैं अतः कृपाकर आप मेरे अपराध क्षमा कीजिए और मुझ पर प्रसन्न होइये। इस प्रकार स्तुति कर प्रणाम करे।

इनकी प्रदक्षिणा चन्द्राकार करनी चाहिए तथा त्रिदल बिल्वपत्र,

चन्दन, जलयुक्त अधोमुख ही चढ़ाना चाहिए जिनमें चक्र-चिन्ह एवं वज्र न हों। इनका विधिपूर्वक पूजन करने वाला सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि एवं बुद्धिमान्, विद्वान् पुत्र प्राप्त करता है।

श्रीधनयक्ष कुण्ड (धनैया कुण्ड)

तस्मात्क्षीरोदक स्थानान्नैर्ऋत्ये तीर्थमुत्तमम्।
कलिकिल्विष संहारकारकं प्रत्ययात्मकम्।।
परं पवित्रमतुलं सर्वकामार्थ सिद्धिदम्।
धनयक्ष इति ख्यातं परं प्रत्यय कारणम्।।
यत्र स्नात्वा विधानेन दौर्गन्ध्यं त्यजतिक्षणात्।
पूजां कुर्यान्निधीनाञ्च नवानामपि सुव्रतः।।

उक्त क्षीरसागर से नैर्ऋत्य कोण पर प्रत्यक्ष फलप्रद विश्वामित्रजी के वरदान से प्रसिद्ध 'धनयक्ष कुण्ड' नामक तीर्थ प्रतिष्ठित है। इस धनयक्ष कुण्ड की ये विशेषतायें हैं कि कलियुग में अपने महत्व का यह पूर्ण प्रमाण देने वाला है। प्रत्यक्ष प्रत्ययकारक अर्थात् जिसमें स्नान करने मात्र से मनुष्य के शरीरजात पसीने में होने वाली दुर्गन्धि तत्काल मिटती है। यहाँ पर नव-निधियों का पूजन करना चाहिए।

महापद्मश्च पद्मश्च शंखौ मकर कच्छपौ।
मुकुन्द कुन्द नीलाश्च खर्वश्च निधयो नव।।
एतेषामपि कुण्डेऽत्र सन्निधि र्वर्त्ततेऽनघ।
जलमध्ये प्रकर्तव्यं निधिलक्ष्मिप्रपूजनम्।।
गुप्तदानं प्रयत्नेन कर्तव्यं च विधानतः।
माघे कृष्णचतुर्दश्यां यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।।
नमः प्रमन्थरायेति पूजा मन्त्रोऽयुदाहृतः।

विश्वामित्र उवाच-

यस्तु मोहान्नरो यक्ष स्नानं न कुरुतेकिल।
तस्य साम्वत्सरं पुण्यं त्वं गृहीष्यसि सर्वशः।।

महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द नील और खर्व ये नव-निधियां हैं। इनकी कुण्ड में सन्निधि है। कुण्ड जल में विधिपूर्वक

नव-निधियों का एवं श्रीलक्ष्मीजी का पूजन, स्नान, दान, तर्पण और गुप्तदान करने पर दरिद्र नाश एवं दिव्य रत्नादिकों की प्राप्ति होती है। यहाँ की यात्रा तथा उपरोक्त पूजन करने पर यक्ष की प्रसन्नता से वर्षभर सुख-पूर्वक अयोध्या वास होता है। अन्यथा करने पर विश्वामित्र के दिये हुए वरदान के बल से अयोध्या-वासियों के किये हुए वर्षभर की पुण्यराशि को यह यक्ष हरण करता है।

(उक्त कुण्ड में स्नान कर 'ओं नमः प्रमन्थराय' इस मन्त्र से उस धनयक्ष का पूजन एवं उसे प्रणाम करना चाहिए।)

वस्तुतः- महाराज हरिश्चन्द्र के राज्यकाल की स्मृति-स्वरूप यह तीर्थ, अब तक यहाँ उपलब्ध है जो रक्षणीय है तथा इसके जीर्णोद्धार की अपेक्षा है।

श्रीवशिष्ठ कुण्ड, वामदेवजी

ईशान्ये चक्रतीर्थातु तीर्थं चान्यन्मनोहरम्।
वशिष्ठकुंड माख्यातं सर्वंपापं हरं सदा।।
वशिष्ठस्य सदा तत्र निवासस्तु तपोनिधेः।
अरुन्धती सदा तस्य वर्तते निर्मलव्रता।।
अत्र स्नानं विशेषेण श्रद्धापूर्वमतन्द्रितः।
यः कुर्यात्प्रयतो धीमान् तस्य पुण्य मनुत्तमम्।
वामदेवस्य तत्रैव सन्निधिर्वर्ततेऽनघे।।
वशिष्ठ वामदेवौ च पूजनीयौ प्रयत्नतः।
पतिव्रता पूजनीयाऽरुन्धती च विशेषतः।।
स्नातव्यं विधिना तत्र दातव्यं च स्वशक्तितः।
सर्वकामफलप्राप्तिर्जायते नात्र संशयः।
अत्र यः कुरुते स्नानं स वशिष्ठ समो भवेत्।।
विष्णुपूजा प्रयत्नेन कर्त्तव्या श्रद्धयान्वितैः।
सर्वपाप विशुद्धात्मा विष्णुलोके वसेत्सदा।।
भाद्रेमासि सिते पक्षे पञ्चम्यां नियतव्रतैः।
तस्यसाम्वत्सरीयात्रा कर्त्तव्या विधिपूर्विका।।

शंकरजी ने पार्वतीजी से कहा- हे देवि! उक्त चक्रतीर्थ से

ईशानकोण में समस्त पापों को नाश करने वाला सुन्दर वशिष्ठ कुण्ड प्रतिष्ठित है यहाँ पर सदा श्रीअरुन्धती सहित तपोनिधि श्रीवशिष्ठजी कामधेनु की सेवा करते हुए यज्ञाग्नि पुरस्सर निवास करते हैं और श्रीवामदेवजी भी इन्हीं के निकट विराजते हैं। इसलिए यहाँ आकर वशिष्ठ कुण्ड में विधिपूर्वक स्नान करके शक्ति अनुसार अन्न, वस्त्रादि दान करते हुए श्रीवशिष्ठजी, श्रीवामदेवजी एवं अरुन्धतीजी का पूजन करना चाहिए। इस कुण्ड में विधिपूर्वक स्नान करने से मनुष्य साक्षात् वशिष्ठजी के सदृश प्रखर ज्ञानवान् होता है। यहाँ पर विष्णु-भगवान् की पूजा श्रद्धापूर्वक करनी चाहिए जिससे कि सर्व-पापों की निवृत्ति होकर आत्मा विशुद्ध होती है एवं विष्णुलोक में सदा निवास मिलता है। यहाँ की वार्षिक यात्रा भादौं शुक्ल पंचमी एवं आषाढ़ी पूर्णिमा है।

श्रीसागर कुण्ड

वशिष्ठ कुंडाद् भो देवि ईशाने दिग्दले स्थितम्।
विख्यातं सागरं कुंडं सर्वकामार्थ सिद्धिदम्।।
यत्र स्नाने दानेन सर्वान्कामानवाप्नुयात्।
आश्विने पौर्णमास्यां तु विशेषात्स्नानमाचरेत्।।

उक्त वशिष्ठ कुण्ड से ईशान कोण में परम प्रसिद्ध सर्वार्थ सिद्धिप्रद 'सागर कुण्ड' नामक तीर्थ (जन्मभूमि से पश्चिम) है। जहाँ पर आश्विन पूर्णिमा को विशेष उत्सव पूर्वक यात्रा एवं स्नान, दानादि कर्तव्य है। यह कुण्ड केवल स्मरणीय है।

श्रीब्रह्मकुण्ड

सागरादवायु कोणे तु ब्रह्मकुंडं मनोरमम्।
अत्रस्नानेन विधिवत्पापात्मनोऽपि जन्तवः।।
विमानं हंससंयुक्तमास्थाय रुचिराम्बराः।
निवसन्ति ब्रह्मलोके यावदागत सम्प्लबम्।।
कार्त्तिके शुक्लपक्षस्य चतुर्दश्यां सुरोत्तमाः।
यात्रा भविष्यति सदा सुराः सांवत्सरी मम।

सक्तसागर कुण्ड के वायुकोण में ब्रह्मकुण्ड नामक तीर्थ है जहाँ पर स्वयं ब्रह्माजी ने आकर तीर्थ यात्रा करते हुए निवास किया था। अपने नाम

का कुण्ड निर्माण कर उन्होंने विधिपूर्वक अनेक यज्ञ यहाँ सम्पन्न किये थे। ब्रह्माजी के वरदान के अनुसार यहाँ विधिपूर्वक स्नान करने वाला प्राणी हंसयुक्त विमान पर चढ़कर ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है। यहाँ का स्नान, दान, अश्वमेघ यज्ञ का फल देने वाला बताया गया है। मनुष्यों को चाहिए कि इस कुण्ड में कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी को वार्षिकी यात्रा उत्सव पूर्वक करें। वर्तमान समय में यहाँ सिक्खों का गुरुद्वारा है। ब्रह्माजी की प्रतिमा दर्शनीय है, कुण्ड सरयू मे विलीन है।

वैतरणी तीर्थ

विद्याकुंडाद्दक्षिणे तु वैतरणी विराजते।
वैतरण्यां कृतस्नानो यमलोकं न पश्यति।।
भाद्रेमासि पूर्णिमायां यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।

श्री शंकर जी ने कहा- हे देवि! उक्त विद्या कुण्ड से दक्षिण दिशा में वैतरणी नामक तीर्थ है। इसमें स्नान करने वाला यमलोक को नहीं प्राप्त होता। यहाँ की साम्वत्सरी यात्रा भादौं पूर्णिमा है। यह तीर्थ केशवपुर गाँव में है।

श्रीदुर्गा कुण्ड

सूर्यकुण्डात्पश्चिमे तु दुर्गाकुण्डमनुत्तमम्।
तत्र स्नानेन दानेन श्रद्धया द्विजभोजनैः।।
अष्टम्यां मंगले वाऽपि यांत्रा स्यात्सार्वकालिकी।

सूर्य कुण्ड से कुछ दूर पर कुसुमाहे ग्राम में दुर्गा कुण्ड नामक तीर्थ है। वहाँ पर अष्टभुजी दुर्गा नाम की प्रसिद्धि है। यहाँ प्रति अष्टमी एवं मंगलवार को स्नान-दान एवं ब्राह्मण - भोजनादि पुण्य-कृत्यों के कराने से मनोरथ की सिद्धि होती है।

श्रीरति कुण्ड, श्रीकुसुमायुध कुण्ड

श्रीशंकर उवाच -

घोषार्ककुंडात्भो देवि पश्चिमे दिग्दलेस्थितम्।
रतिकुंडमितिख्यातं सर्वपापापहं सदा।।
यत्र स्नानेन दानेन परां कान्तिमवाप्नुयात्।
तत्पश्चिम दिशाभागे कुसुमायुधनामकम्।।

कुंडं प्रसिद्धमतुलं सर्वकामार्थ सिद्धिदम्।

उस घोषार्क कुण्ड से पश्चिम दिशा में (कुसुमाहे गाँव में) रतिकुण्ड एवं कुसुमायुध कुण्ड तीर्थ हैं। इनमें विधिपूर्वक स्नान करने से पापों का नाश होकर शरीर का सौन्दर्य बढ़ता है। यहाँ की वार्षिकी यात्रा माघ शुक्ल पंचमी को करनी चाहिए। यह तीर्थ पति-पत्नी के पारस्परिक प्रेम का बर्द्धक है।

गिरिजा कुण्ड

कुसुमायुधकंडात्तु प्रतांच्यादिशि संस्थितम्।
तीर्थ गिरिजा कुंडाख्यं जनाभीष्टफलप्रदम्।।

कुसुमायुध कुण्ड से पश्चिम दिशा में जनौरा में श्रीगिरिजा कुण्ड जनमात्र को अभीष्ट सिद्धि देने वाला सुप्रसिद्ध है यहाँ स्नान कर श्रीगिरिजा देवी का पूजन करके ही मन्त्रेश्वर का दर्शन-पूजन करना चाहिए।

श्रीमन्त्रेश्वरजी

मन्त्रेश्वर समं लिंगं न भूतं न भविष्यति।
सुगन्ध पुष्पधूपादिकुङ्कुमाद्यनुलेपनैः।।
पूजनीयः प्रयत्नेन सर्वकामार्थसिद्धिदः।

उक्त कुसुमायुध कुण्ड से पश्चिम दिशा में मन्त्रेश्वर नामक महादेव प्रतिष्ठित हैं यहाँ पर इनकी प्रतिष्ठा श्रीरामचन्द्रजी ने स्वयं की है इसलिए इनकी तुलना दूसरे किसी तीर्थ से नहीं हो सकती। यहाँ आकर सुन्दर पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि द्वारा इनका पूजन करना चाहिए और अपने इष्ट मन्त्र का जप थोड़ी देर बैठकर अवश्य करें वह अनन्त फल देने वाला होता है। मन्त्रेश्वर की महिमा पूर्ण रूप से वर्णन करना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। रामभद्र से कालदेव की मन्त्रणा इसी स्थल पर महा प्रस्थान के सम्बन्ध में हुई थी। जिसका यह स्मृति स्थान है।

श्रीसरोवर

तदुत्तरे सरोरम्यं कुमुदोत्पल मण्डितम्।
तत्र स्नानेन दानेन ब्राह्मणानां च पूजनैः।।
अक्षयं स्वर्गमाप्नोति नात्रकार्या विचारणा।

मन्त्रेश्वर के अति निकट कुछ उत्तर पवित्र श्रीसरोवर है। (जनौरा ग्राम में) जिसमें स्नान-दान, ब्राह्मण-भोजन पूर्वक श्रीजी का पूजन करने से

निःसन्देह अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

श्रीशीतला देवी (देवकाली)

तस्य चोत्तरभागे तु शीतला वर्ततेऽनघे।
तां सम्पूज्यनरो विद्वान् सर्वपापैः प्रमुच्यते।
विस्फोटकरोगादि भये नरैस्तु समुपस्थिते।
कर्तव्यं पूजनं सम्यक् रोगादिभयनाशनम्।।
सर्वदा पूजनं तस्याः सोमवारे विशेषतः।

श्रीमन्त्रेश्वर से उत्तर दिशा में कुछ दूर पर श्रीशीतला देवी प्रतिष्ठित हैं, जो देवकाली नाम से भी विख्यात हैं। प्राणियों के विस्फोटक (चेचक) आदि रोगों की शान्ति ये यहाँ रहकर करती रहती हैं। यहाँ पर इनका पूजन सदा ही करना चाहिए। विशेषकर इनका दर्शन-पूजन प्रति सोमवार को सर्वार्थ सिद्धिप्रद बताया गया है। यहाँ एक मन्दिर में श्रीशीतला देवी दूसरे में महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती प्रतिष्ठित हैं।

श्रीवन्दी देवी

तदुत्तरे तु तत्रैव वन्दी देवीति विश्रुता।
यस्याः स्मरणमात्रेण निगडादिभयं नहि।।

उनसे उत्तर वहीं पर निकट में ही श्रीबन्दीदेवी जी प्रतिष्ठित हैं जिनके दर्शन, पूजन प्रणामादि करने वाले को कारागार (जेल) भोगने का अवसर नहीं मिलता है। यदि कोई प्राणी निरपराधी होते हुए भी कूटनीति द्वारा कारागार में डाल दिया गया हो तो वहीं बैठे-बैठे केवल स्मरण करते रहने पर वह उसे बन्धन से अवश्य मुक्त करती हैं। (अतः प्रत्यक्ष फल देने वाली देवी का दर्शन पूजन करने के लिए धाम-वासीजनों को सर्वदा उत्साहित रहना चाहिए। विशेषतः प्रति मंगलवार को इनका दर्शन पूजन अवश्य करना चाहिए। लोक में यह श्रीजलापा के नाम से प्रसिद्ध हैं, जो गुरुकुल के निकट हैं।

श्रीचुटकी देवी

तदुत्तरदिशाभागे चुटकीति प्रकीर्तिता।
वर्तते परमासिद्धिरूपिणी स्मरणान्नृणाम्।।
सुसंदिग्धेषुकार्येषु भये वा समुपागते।

यस्याः स्मरणतोनृणां सर्वसिद्धिः प्रजायते।।
अग्रे तस्याः सदा कार्यो नृभिरङ्गुलितो ध्वनिः।
दीप दानं प्रयत्नेन कर्तव्यं नियतात्मभिः।।
चतुर्दश्यां चतुर्दश्यां तस्याः यात्रा प्रकीर्तिता।

उसके उत्तर दिशा में चुटकी नाम की देवी प्रसिद्ध हैं, जो कि केवल स्मरण मात्र से सब सिद्धियों को देने वाली एवं तीर्थवास में संशय उपस्थित होने वाले भय को मिटाने वाली कही गई हैं। मनुष्यों को यहाँ आकर इनकार पूजन कर उनके सामने अँगुलियों द्वारा ध्वनि करना चाहिए अर्थात् चुटकी बजाना एवं दीपक जलाना ही इनके प्रसन्नतार्थ विशेष कर्तव्य है। प्रत्येक चतुर्दशी इनकी यात्रा तिथि है। इनका स्थान रानूपानी के सामने सड़क पर डिग्री कॉलेज के समक्ष है।

श्रीशक्र कुण्ड

तत्पश्चिमे दिशाभागे कुंडमस्ति शतक्रतोः।
कार्त्तिके कृष्णपक्षस्य त्वमायां च विशेषतः।।
तत्र स्नानेन दानेन स्वर्गलोकमवाप्नुयात्।

चुटकी देवी से थोड़ी दूर पर पश्चिम दिशा में (गुरुकुल के पास) शक्र कुण्ड है। कार्तिक कृष्णपक्ष की अमावस्या को यहाँ स्नान दान करने वाले स्वर्गलोक को प्राप्त होते हैं।

निर्मली कुण्ड

ततः पश्चिम दिग्भागे निर्मलीकुंडमुत्तमम्।
ब्रह्महत्याभयाभ्दीतो वृत्रं हत्वा शतक्रतुः।।
यत्रागत्य पुरोदेवि वज्री निर्मलतां गतः।
अत्र स्नानेन दानेन निर्मलाः स्युर्न संशयः।
कुण्डस्य वार्षिकी यात्रा श्रावणे पूर्णिमातिथौ।

उक्त कुण्ड से पश्चिम दिशा में (गुप्तारघाट के पास) 'निर्मली कुण्ड' तीर्थ है। जहाँ पर वृत्रासुर को मारकर ब्रह्म-हत्या-दोष से युक्त इन्द्र स्नान मात्र से निष्पाप हुए थे। इस निर्मली कुण्ड में स्नान दान करने से प्राणियों के ब्रह्महत्यादि महापाप नष्ट होते हैं। और उन्हें पूर्ण निर्मलता प्राप्त होती है। यहाँ की वार्षिकी यात्रा श्रावण पूर्णिमा को प्रसिद्ध है।

श्रीनारायण कुण्ड

सूर्यकुंडादग्नि कोणे नर ग्रामो विराजते।
नरकुंडमितिख्यातं सर्वपापापहं सदा।।

सूर्य कुण्ड से अग्निकोण में नरियावा ग्राम में नरकुण्ड नामक तीर्थ है। जो दर्शन मात्र से सब पापों का नाश करता है।

श्रीनारायण कुण्ड

तस्माद्दक्षिण दिग्भागे ग्रामो नारायणाह्वयः।
नारायणस्य तीर्थं च वर्तते परमं महत्।।
कार्त्तिके शुक्ल पक्षस्य चैकादश्यां शुचिस्मिते।
तयोर्यात्रा प्रकर्त्तव्या सर्वकाममभीप्सुभिः।।

उस नर कुण्ड से थोड़ी दूर दक्षिण नारायणपुर ग्राम में नारायण कुण्ड नामक तीर्थ है। कार्तिक शुक्ल एकादशी को नर-नारायण दोनों कुण्डों की वार्षिकी यात्रा सर्वार्थ-सिद्धि देने वाली है।

श्रीत्रिपुरारिजी

सूर्यकुण्डात्पूर्वभागे त्रिपुरारिर्विराजते।
सरयूसलिले स्नात्वा कृत्वा संध्याजपादिकम्।।
पूजयेत त्रिपुरारिं च कार्त्तिके पूर्णिमातिथौ।
सर्वान्कामानवाप्नोति त्रिपुरारेः प्रसादतः।।

सूर्यकुण्ड से पूर्व कुछ दूर सड़क पर तिहुरा ग्राम में श्रीत्रिपुरारि महादेवजी का स्थान है। यहाँ पर (सरयू स्नान पूर्वक) त्रिपुरारि शंकरजी का पूजन करने से शंकर जी प्रसन्न होकर प्राणियों की सब कामनाओं को पूर्ण करते हैं। इनकी वार्षिकी यात्रा कार्तिक पूर्णिमा तिथि है।

श्रीकालिका देवी

कुण्डस्य पश्चिमे देवि कालिका नाम राजते।
तस्याः पूजनमात्रेण सर्वसिद्धिः प्रजायते।।

श्रीशंकरजी ने कहा- हे देवि! भरत कुण्ड के पश्चिम भाग में श्रीकालिका देवी हैं। उनके पूजन मात्रसे सभी सिद्धियां प्राप्त होती हैं और पूजन पाकर प्रसन्न होने पर सभी प्रकार से भक्तों की रक्षा करती हैं एवं

उसकी सारी-बाधाओं को हरण कर लेती हैं।

श्रीजटा कुण्ड

तस्याः पश्चिमतो देवि जटा कुण्डमनुत्तमम्।
यत्र रामादिभिः सर्वैः जटा परिह्रता निजाः।।

उस देवी से पश्चिम तरफ थोड़ी दूर पर जटा कुण्ड प्रसिद्ध है। बनवास से लौटकर चारों भाइयों ने जटा संशोधन किया था। इसी से इसका नाम जटा कुण्ड हुआ। यह तीर्थ अतीव पुण्यदायक है तथा स्नान, दानादि करने पर प्राणियों की सम्पूर्ण कामनायें पूर्ण करता है विशेषतः इस जटा कुण्ड पर श्रीसीताराम लक्ष्मणादि की पूजा करनी चाहिए। जटा कुण्ड तथा भरत कुण्ड की वार्षिकी यात्रा चैत्र कृष्ण चतुर्दशी है।

श्रीअजितजी

जटा कुण्डात्पश्चिमे तु ह्यजितोऽपि विराजते।
निराहारो नरो भूत्वा क्षीराहारोऽपि वा पुनः।।
अजितं पूजयेद्यस्तु तस्य सिद्धिः करेस्थिता।

जटा कुण्ड से कुछ ही दूर पश्चिम दिशा में श्रीअजितजी का आश्रम (कैलपारा गाँव में) है। यहाँ पर निराहार अथवा दुग्धाहार कर संयमित हो जो लोग श्रीअजितजीका पूजन करते हैं। उन्हें सब सिद्धियाँ सहज में प्राप्त होती हैं। (यहाँ पर गीत, पद्यादि द्वारा कीर्तन महोत्सव करना जनमात्र का कर्तव्य है।)

श्रीशत्रुघ्न कुण्ड

तस्मात्पूर्वदिशाभागे नाम्ना शत्रुघ्नकुंडकम्।
तत्र स्नात्वा च दत्वा च सर्वान्कामानवाप्नुयात्।।
कृष्णपक्षेतु चैत्रस्यैकादश्यां स्नानमाचरेत्।

उक्त तीर्थ से पूर्व दिशा में कुछ दूरी पर (दोषपुर गाँव में) श्रीशत्रुघ्न कुण्ड है। वहाँ पर स्नान, दान करने से सम्पूर्ण कामनायें सिद्ध होती हैं। चैत्र कृष्ण एकादशी को यहाँ की वार्षिकी यात्रा करनी चाहिए।

श्रीपिशाचमोचन तीर्थ

तस्मात्पूर्व दिशा भागे तीर्थ सर्वोत्तमोत्तमम्।
पिशाचमोचनं नाम विद्यते च फलप्रदम्।।

भरत कुण्ड के निकट पूर्व दिशा में पिशाचमोचन नामक तीर्थ है। यहाँ पर स्नान, दान तर्पणार्दि करने पर पिशाचत्व से मुक्ति मिलती है। यहाँ पर श्राद्ध की प्रधानता है। श्रद्धापूर्वक यहाँ की यात्रा मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्दशी को करनी चाहिए। यात्रा के दिन स्नान, तर्पण, श्राद्ध करने वाला व्यक्ति तथा उसके पितृगण पिशाचत्व को नहीं प्राप्त होते हैं। (यदि किसी को प्रेतबाधा अनुभूत हो तो यहाँ श्रद्धापूर्वक स्नान कर सर्वबाधाओं से मुक्ति पा सकता है।)

श्रीसीता तीर्थ, श्रीराम कुण्ड

सीताकुण्डमिति ख्यातं श्रीदुग्धेश्वर सन्निधौ।
रामकुंडे प्रसन्नात्मा यथा नान्यत्र वै तथा।।
स्नात्वा कुण्डे तु रामस्य सीताकुंडे तथैव च।।
मनः प्रसाद मगमत्तत्र तस्य महात्मनः।।

तमसा नदी के उस पार दुग्धेश्वर के समीप रामपुरभगन गाँव में श्रीसीता तीर्थ एवं श्रीराम कुण्ड है। यहाँ पर किसी समय एक पवित्रात्मा ब्राह्मण भारतवर्ष के समस्त तीर्थों की यात्रा करते हुए आये। यहाँ आते ही इस तीर्थ में स्नान करने मात्र से उनका अन्तःकरण निर्मल हो गया। तब वे यहीं रहकर योगावलम्बन पूर्वक प्राणायाम द्वारा स्थूल शरीर को परित्याग कर परम-पद को प्राप्त हुए। विमान पर चढ़कर अप्सराओं द्वारा पूजा पाते हुए दिव्य धाम को गये उन्हें इसी श्रीराम कुण्ड के प्रभाव से ब्रह्म का सायुज्य प्राप्त हुआ। इसलिए प्राणी श्रीसीता कुण्ड एवं श्रीराम कुण्ड में स्नान, दान, पूजन अवश्य करें जिससे उन्हें अक्षय स्वर्गलोक की प्राप्ति होगी। इन दोनों कुण्डों की वार्षिकी यात्रा भाद्र शुक्ल चतुर्दशी है।

भैरव कुण्ड

तस्माद्दक्षिण दिग्भागे भैरवो नाम नामतः।
यं दृष्ट्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः।।
रक्षितो वासुदेवेन क्षेत्ररक्षार्थमादरात्।
मार्गशीर्षस्य कृष्णायामष्टम्यां तस्यनिर्मिता।।

उक्त तीर्थ से निकटतम दक्षिण दिशा में भैरव कुण्ड है जिसका दर्शन करने से प्राणी पापों से छुटकारा पाता है। श्रीराघवेन्द्र भगवान् वासुदेव

ने अपने क्षेत्र की रक्षा के लिए ही आदर-पूर्वक यहाँ इनको प्रतिष्ठित किया है। यहाँ के निवासियों को धूप, दीप, नैवेद्य, फलादिक की बलि देकर यत्नपूर्वक इनकी पूजा प्रतिवर्ष अगहन कृष्ण अष्टमी को अवश्य करनी चाहिए। जिससे निर्विध्न सुख पूर्वक अयोध्या वास करने का सुपास मिलता है। (भैरव कुण्ड, सीता कुण्ड, राम कुण्ड, हनुमान कुण्ड तथा विभीषण कुण्ड वर्तमान समय में दराबगंज में हैं।)

दुग्धेश्वर, क्षीर कुण्ड

दुग्धेश्वर मिति ख्यातं क्षीरकुण्डं पवित्रकम्।
ततो रघुपति प्रीतो वशिष्ठोक्त विधानतः।।
पूजयामास तल्लिंग दुग्धेश्वरं प्रथां गतम्।
ज्येष्ठे मासि चतुर्दश्यां यात्रा साम्वत्सरी भवेत्।।

जब रावण को परास्त कर पुष्पक विमान द्वारा सीता, लक्ष्मण सहित श्रीरामजी अयोध्या पधारे। उस समय यहाँ पर वशिष्ठादि मुनियों समेत श्रीभरतजी स्वागतार्थ उपस्थित हुए। उसी समय कामधेनु स्तनों से दुग्धस्राव करती हुई यहाँ पर उपस्थित हुई जिसे देखकर समस्त पार्षद आश्चर्यान्वित होकर श्रीराघवेन्द्र से कामधेनु का परिचय पूछने लगे। तब श्रीरामचन्द्रजी ने आदर-पूर्वक यह प्रश्न गुरु वशिष्ठजी के सम्मुख उपस्थित किया। शान्तचित्त से क्षणकाल ध्यान करते हुए श्रीवशिष्ठजी कहने लगे-हे राम! यह कामधेनु है, तुम्हारे स्नेह से वात्सल्यता प्रदर्शन करती हुई स्तनों से दुग्ध की धारा बहा रही है और उक्त दुग्ध के मध्य में प्रच्छन्न (छिपे हुए) भगवान् शंकर तुम्हे देखने के लिए पधारे हैं अतः तुम यत्नपूर्वक सीता समेत कामधेनु की तथा भगवान् शंकर की सादर पूजा करो। इनकी दुग्धेश्वर नाम से प्रसिद्धि होगी। यहाँ पर क्षीर-राशि एकत्रित होने के कारण परम-पवित्र क्षीर कुण्ड तीर्थ प्रसिद्ध होगा। श्रीवशिष्ठजी के कथनानुसार सीताजी के सहित श्रीराम ने दुग्धेश्वरजी की पूजा की। श्रीदुग्धेश्वर के दर्शन-पूजन से प्राणियों की सम्पूर्ण कामनायें पूर्ण होती हैं। विशेषकर ज्येष्ठ चतुर्दशी को इनकी यात्रा होती है।

सुग्रीव तीर्थ

ततः पूर्वदिशाभागे सुग्रीवरचितं महत्।

तीर्थं चैव सुकण्ठस्य वर्त्तते सन्निधौ शुभम्।।

श्रीदुग्धेश्वर के पूर्व की ओर सुग्रीव तीर्थ है। यहाँ पर स्नान, दान एवं श्रीरामजी का पूजन करने से सम्पूर्ण कामनायें सिद्ध होती हैं।

हनुमत्कुण्ड, विभीषण तीर्थ

तत्प्राच्यां दिशि संस्थाने हनुमत्कुंडमित्यपि।
तस्य पश्चिम दिग्भागे विभीषण सरः शुभम्।।

उसके पश्चिम में हनुमत्कुण्ड प्रसिद्ध है। हनुमत्कुण्ड के पश्चिम तरफ विभीषण तीर्थ है। इन दोनों कुण्डों का विधिवत् स्नान, दर्शन तथा वहाँ श्रीरामजी का पूजन करने से सम्पूर्ण कामनायें सिद्ध होती हैं। उक्त दोनों कुण्डों की यात्रा भाद्र शुक्ल चतुर्दशी को करनी चाहिए। (ये तीर्थ दराबगंज के आस-पास है)

आस्तीकाश्रम, रमणकस्थान

आस्तीकस्य ततः स्थानं पश्चिमे दिग्दले स्थितम्।
यस्य दर्शन मात्रेण सर्पभीतिर्न जायते।।
ततो रमणकं स्थानं दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते।

उसके पश्चिम दिशा में आस्तीकाश्रम है, जिसके दर्शन मात्र से सर्प भय निवृत्त हो जाता है। (विशेषतः जहाँ भी कहीं सर्प बाधा उपस्थित हो वहाँ 'आस्तीक' इस नाम को तीन बार उच्चारण करते ही सर्प बाधा नष्ट हो जाती है, वर्तमान में इस स्थान की प्रसिद्धि आस्तीक नाम से है।) वहाँ से निकट ही रमणकजी का स्थान है, जिसके दर्शन से पाप नष्ट होते हैं।

घृताची कुण्ड

तस्माद्दक्षिण दिग्भागे घृताची तीर्थमुत्तमम्।
सरयूजल मध्ये तु सदा तिष्ठति सुन्दरि।।

उसके दक्षिण दिशा में (श्रीसरयू में) घृताची कुण्ड नामक तीर्थ है। जो सरयू में निमग्न है। पुराकाल में श्रीवात्स्य ऋषि हिमालय पर तपस्या करते थे। उनके तप को देखकर इन्द्र ने भयभीत होकर विघ्न करने के लिए धृताची नाम की अप्सरा को भेजा, वह ऋषि के आश्रम में आकर अपने हाव - भाव से ऋषि को उद्विग्न करके श्राप-भाजन हुई। तदुपरान्त ऋषि की स्तुति करके उसने अपनी दीनता प्रकट कर शाप से मुक्त होने का उपाय पूछा।

वात्स्य ऋषि ने घृताची को यहाँ अवध में सरयू स्नान के लिए आदेश प्रदान किया, जिससे श्रापजन्य कुरूपता से मुक्त होकर पूर्ण नव-यौवनशालिनी, सौन्दर्य-भूषिता हुई। उन्हीं ऋषि के आशीर्वाद से वह स्थल परम पवित्र घृताची कुण्ड नाम से प्रसिद्ध हुआ। यहाँ विधिपूर्वक स्नान करने से निःसन्देह सौन्दर्य प्राप्त होता है। पौष शुक्ल चतुर्दशी को यहाँ की वार्षिकी यात्रा है। (यह तीर्थ वर्तमान समय में पराश ग्राम में है।)

सरयू घाघरा संगमतीर्थ

ततः पश्चिम दिग्भागे योजनद्वयसम्मिते।
संगमो वर्त्तते देवि सर्वपाप प्रणाशनः।।
पौषेमासि विशेषेण स्नानं बहुफलप्रदम्।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन संगमे स्नानमाचरेत्।।

यहाँ से पश्चिम दिशा में दो योजन की दूरी पर श्रीसरयू और घर्घर (घाघरा) संगम तीर्थ हैं। इस संगम में विधिपूर्वक स्नान, पितरों का तर्पण करके यथाशक्ति उत्तम ब्राह्मणों को स्वर्ण, अन्न, वस्त्र आदि दान भी कर्तव्य है और परम वैष्णव मन्त्रों द्वारा हवन करना चाहिए। विशेषतः पूस के महीने में यहाँ कल्पवास एवं मेला होता है। घृतदीप दान यहाँ आवश्यक है। जो भक्तजन पूस शुक्ल चतुर्दशी को व्रती होकर संयम पूर्वक यहाँ रात्रि जागरण करके प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में (संगम में) स्नान करेंगे। वे अधिक फल के भागी होंगे। प्रतिवर्ष यहाँ की यात्रा करनी चाहिए, जो सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान, दान का फल देती है।

बाराह क्षेत्र, बाराही देवी

पुरा कृतयुगे देवि पृथिव्युद्धरणं कृतम्।
तत्र निष्पादितं तीर्थ वराहेण महात्मना।।
हत्वा दुष्टं हिरण्याक्षं पृथिवी स्नापनं कृतम्।
धर्मार्थ काममोक्षाणां प्राप्तिस्तत्र न संशयः।।

श्रीशंकरजी ने कहा- हे देवि! सतयुग में पृथ्वी का उद्धार करने के लिए विष्णु भगवान् ने बाराह रूप धारणकर हिरण्याक्ष का वध किया और पुनः पृथ्वी को यथा-स्थान में स्थापित किया, तब गन्धवों के समेत समस्त देवगणों ने प्रसन्नता पूर्वक उनकी स्तुति की-

देवाधि देवाय नमो नमो विभो, श्रीयज्ञवाराहभयापह प्रभो।
स्वदंष्ट्रयोद्धृत्यमहीप्रवर्त्तिने, कृपासमुद्राय वरप्रदायिने।।

हे देवताओं के स्वामी! सर्वसमर्थ, भय को दूर करने वाले श्रीयज्ञ बाराह आपको नमस्कार है। हिरण्याक्ष द्वारा हरण की हुई पृथ्वी को अपने दांतों से उठाकर पुनः स्थापति करने वाले दयासागर, वर प्रदान करने वाले श्रीबाराह भगवान् को नमस्कार है। यात्रियों को यहाँ सरयू में स्नान करके श्रीबाराह भगवान् का पूजन करना चाहिए। तत्पश्चात ऊपर कहे गये श्लोक द्वारा स्तुति भी करनी चाहिए। जिससे सब पापों का नाश होता है और धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है। पौष भर यहाँ की विशेष यात्रा है। क्षेत्रवासियों को इनका दर्शन, पूजन यत्न द्वारा करना चाहिए।

'मैं पुनि निज गुरुसन सुनी कथा सु सूकर खेत'

गोस्वामी तुलसीदासजी के रामचरितमानस के वाक्य इसी बाराह क्षेत्र के बोधक हैं। अब तक तुलसीदासजी के समय में दान रूप में दी हुई भूमि यहाँ उपलब्ध है जो कि नरहरिदास जी की कुटिया कहलाती है। आजकल यहाँ पशका गाँव है और यहाँ से चार कोस की दूरी पर उत्तरी भवानी के नाम से प्रसिद्ध श्रीबाराही देवी हैं।

जम्बू तीर्थ

ततो गच्छेतु देवेशि जम्बू तीर्थ मनुत्तमम्।
बाराहत्पश्चिमे भागे सर्व कामदुघं स्मृतम्।।
तर्स्मिस्तीर्थे नरः स्नात्वा ब्रह्महापि विशुद्धयति।

श्री शंकरजी ने कहा-हे देवि! उक्त बाराह तीर्थ से पश्चिम दिशा में सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि देने वाला पवित्र जम्बू तीर्थ (नारायणपुर चरसंडी गाँव में) है। इस भव्य-तीर्थ में स्नान करने वाले प्राणी ब्रह्महत्यादि पापों से छूट जाते हैं। सम्पूर्ण वेदों के ज्ञाता देव शर्मा नामक ब्राह्मण पूर्वकाल में यहाँ निवास करते थे। उनके आश्रम में कदाचित् एक श्रृंगाल आया और वह आश्रम के दिव्य दर्शन करते ही भव्य-देह को प्राप्त कर भगवद्धाम को चला गया, तबसे यह स्थल जम्मूतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

तुन्दिलाश्रम

अपर्णेत्वं महाभागे श्रृणुष्वैक मनासती।